भारत का माओवादी कम्युनिस्ट केन्द्र (MCCI)
एवं
सीपीआई (एमएल) [पीडब्ल्यू]
का संक्षिप्त इतिहास

भारत का माओवादी कम्युनिस्ट केन्द्र (MCCI)
का संक्षिप्त इतिहास

सर्वविदित है कि विगत 20वीं सदी के 60 के दशक में समूची दुनिया को हिला देने वाली एक भारी उथल-पुथल की परिस्थिति मौजूद थी। इसी पृष्ठभूमि में भारत में भी सच्चे क्रांतिकारियों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्सेतुङ विचारधारा (या माओवाद) से प्रेरित होकर संशोधनवाद के खिलाफ विद्रोह का बिगुल फूंक दिया था। उसी समय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर माओ के नेतृत्वाधीन सी.पी.सी. द्वारा ख्रुश्चेव संशोधनवाद के विरुद्ध महान बहस संचालित की गई थी और उसके ही जबर्दस्त प्रभाव के बतौर भारत में भी संशोधनवाद के खिलाफ संघर्ष संचालित करते हुए कम्युनिस्ट आंदोलन की एक नई शुरुआत हुई।

ऐसी एक स्थिति में ही संशोधनवाद के विरुद्ध संघर्ष चलाये जाने के दौरान ही कामरेड सी.एम. और कामरेड के.सी. जैसे अनेकों असाधारण व अग्रिम पंक्ति के नेतृत्वकारी कामरेड उभर आये। 1964 में सी.पी.एम. की सातवीं कांग्रेस के दौरान संशोधनवाद के खिलाफ संघर्ष दरअसल साफ तौर पर संसदवाद बनाम दीर्घकालीन लोकयुद्ध के रास्ते के बीच के संघर्ष के बतौर सामने आया। इसके बाद दुनिया को हिला देने वाली महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति (जी.पी.सी.आर.) ने भारत के कम्युनिस्ट आंदोलन की इस नई शुरुआत को जबर्दस्त तरीके से प्रभावित किया। 1967 में कामरेड सी.एम. के नेतृत्व में भारत में बसंत के वज्रनाद के बतौर महान नक्सलबाड़ी विद्रोह की घटना घटी। पूरे भारत में संशोधनवाद के खिलाफ एक नया

उभार शुरु हुआ और राजनीतिक उथल-पुथल की स्थिति पैदा हुई।

ऐसी स्थिति में, एक ओर 1969 के 22 अप्रैल का. सी.एम. के नेतृत्व में सी.पी.आई. (एम-एल) पार्टी का गठन हुआ और उसी वर्ष 20 अक्टूबर को का. के.सी. के नेतृत्व में माओवादी कम्युनिस्ट केन्द्र (या एम.सी.सी.) का गठन हुआ। इस तरह दो क्रान्तिकारी धारा बहुत से विघ्न-बाधाओं को लांघते हुए अलग-अलग रूप से ही सही, पर लगातार आगे की ओर बढ़ती गई और अंततः वर्ष 2004 के 21 सितम्बर को उक्त दो धाराओं के मिलन से एक महाधारा का सृजन हुआ और सी.पी.आई.(एम-एल)[पी.डब्लु.] व एम.सी.सी.आई. मिलकर भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का जन्म हुआ।

अनिवार्यतः दोनों पार्टियों के लक्ष्य-उद्देश्य एक रहने के बावजूद दोनों के इतिहास में एकरूपता का पहलू भी मौजूद है और साथ-साथ कुछ भिन्नताएं भी हैं।

अब नयी पार्टी के केन्द्रीय मुखपत्र के जरिए दोनों के संक्षिप्त इतिहास के बारे में आम कतारों के बीच जानकारी देने हेतु जो निर्णय लिया गया है उसी के ही एक अंश के रूप में इस लेख में एम.सी.सी.आई. के इतिहास को संक्षिप्त रूप में पेश किया जा रहा है।

एम.सी.सी.आई. के इतिहास की शुरुआत

राजनीतिक व सांगठनिक मामले में संशोधनवादी मत व पथ के साथ सुस्पष्ट विभाजन-रेखा खींचते हुए क्रान्तिकारी सिद्धांत (Theory) के आधार पर और क्रान्तिकारी संघर्ष के दौर से गुजरते हुए सही मायने में क्रान्तिकारी पार्टी का निर्माण करने और भारतीय क्रान्ति को विजय की राह पर आगे बढ़ा ले जाने के दृढ़ संकल्प के साथ ही 1964 में सी.पी.आई.(एम) की संशोधनवादी सातवीं कांग्रेस के तुरंत बाद एक क्रान्तिकारी केन्द्र की स्थापना करते हुए बाद में 1969 के 20 अक्टूबर को एम.सी.सी. संगठन का निर्माण हुआ।

सबसे पहले का. के.सी., का.अमूल्य सेन और का. चन्द्र शेखर दास की पहल से निर्मित इस संगठन का स्वरूप था - एक क्रांतिकारी केन्द्र के रूप में। उस समय इस केन्द्र की शक्ति बहुत ही सीमित और अलग-थलग थी। इसीलिए ऐसी स्थिति में हमारा महत्वपूर्ण कर्तव्य क्या होना चाहिए इस पर का. के.सी. ने जो कहा, खूब संक्षेप में कहने से वे हैं: भारतीय क्रांति की मार्गदर्शक लाइन के बतौर एक ठोस रणनीति व कार्यनीति संबंधी लाइन के आधार पर जनमत का सृजन करना, पेशेवर क्रांतिकारी कैडर का निर्माण करना तथा शहर में कामकाज की लाइन, मजदूर, छात्र-युवा आदि के अन्दर कामकाज की लाइन, ग्रामीण क्षेत्र में कामकाज की लाइन और प्रधान व केन्द्रीय काम के रूप में फौज व आधार क्षेत्र बनाने हेतु शक्ति व सामर्थ्य के अनुसार ठोस योजना अपनाना और वास्तविक कामकाज में उतरना

आदि-आदि।

उसी समय का. के.सी. के कुशल नेतृत्व में संशोधनवाद की ठोस अभिव्यक्ति के बतौर जिन सभी अभिव्यक्तियों के विरूद्ध संघर्ष चलाने का निर्णय लिया गया वे हैं: 1) अर्थवाद, 2) स्वयंस्फूर्तता, 3) कानूनवाद, 4) नौकरशाही केन्द्रीयता, 5) बुर्जुआ संसदवादी व्यवस्था या वोटवाद, आदि। संशोधनवाद के खिलाफ संघर्ष चलाते समय जिन सभी अवसरवादी धारणाओं के खिलाफ हमें जोरदार संघर्ष करना पड़ा, वे हैं: i) जो धारणा उपनिवेशवाद का ही नया रूप के बतौर नव उपनिवेशवाद को यानी साम्राज्यवाद द्वारा प्रत्यक्ष शोषण-शासन के बदले अप्रत्यक्ष शोषण का तरीका अपनाया गया इसे अस्वीकार करती है, ii) जो धारणा भारत राष्ट्र का (नव औपनिवेशिक किस्म का) अर्द्धऔपनिवेशिक व अर्द्धसामंतवादी चरित्र को अस्वीकार करती है तथा भारतीय क्रांति के राष्ट्रीय व जनवादी स्वरूप को अस्वीकार करते हुए एक छलांग में समाजवाद में जाने की बात करती है और जो धारणा बड़े बुर्जुवाओं के दलाल चरित्र को अस्वीकार करती है तथा या तो तमाम बुर्जुआ वर्ग को ही साम्राज्यवाद विरोधी राष्ट्रीय बुर्जुआ कहती है, नहीं तो राष्ट्रीय बुर्जुआ के अस्तित्व को अस्वीकार करते हुए सभी बुर्जुआ को साम्राज्यवाद के दलाल मानती है, iii) जो धारणा भारत की राष्ट्रीयता (Nationality) समस्या की वर्गीय अन्तर्वस्तु को और राष्ट्रीयता समस्या जो भारतीय क्रांति का ही अभिन्न अंग है उसे नहीं समझती है तथा राष्ट्रीयता की समस्या का सही हल हेतु मजदूर वर्ग व कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व की जरूरत को नहीं समझती और हर राष्ट्रीयता (या जाति) की स्वाधीनता व समान अधिकार और आत्मनिर्णय के अधिकार को अस्वीकार करती है, iv) जो धारणा संसदीय मार्ग अथवा शान्तिपूर्ण रास्ते से अथवा शहर में बगावत संचालित कर अथवा शहर व गांव में एक ही साथ में बगावत कर क्रांति सफल करने की बात करती है और असल में का. माओ प्रदर्शित दीर्घकालीन लोकयुद्ध का मार्ग ही भारत की मुक्ति का एकमात्र सही मार्ग है इसे अस्वीकार करती है, v) जो धारणा संशोधनवाद के ठोस और सबसे ज्यादा खतरनाक रूपों के विरूद्ध कथनी व करनी में संघर्ष करने से अनाकनी करती है, इत्यादि-इत्यादि।

ऐसी अवस्था में, का. के.सी. ने कहा, ''क्रांति करने के लिए इच्छा रखते हैं ऐसे किसी भी देश के कम्युनिस्टों के सामने उस देश की ठोस स्थिति के अनुसार किसी ठोस रणनीति व कार्यनीति संबंधी लाइन, पद्धति, योजना इत्यादि अगर न रहे, तब उस देश के कम्युनिस्टों के लिए जनता को एकजुट करना और दीर्घकालीन लोकयुद्ध के जरिए अन्तिम विजय हासिल करने के रास्ते से आगे बढ़ना संभव नहीं है। भारत जैसे देश की विशालता और बिलकुल ही

असमान आर्थिक व राजनीतिक विकास की बात विचार करने से और अनेकों संशोधनवादी पार्टियों के अस्तित्व की बात को ध्यान में रखने से यह बात और जोरपूर्वक कही जा सकती है कि केवल ऐसा ही एक ठोस रणनीति व कर्यनीति को दृढ़तापूर्वक अनुसरण करके ही समूचे देश के कम्युनिस्टों को और जनता को एक अभिन्न मत व मार्ग के आधार पर एकताबद्ध करना, दीर्घकालीन लोकयुद्ध में समूचे देश की जनता को क्रमशः लामबन्द करना तथा अन्तिम विजय की ओर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ाकर ले जाना संभव है।''

भारतीय क्रान्ति की रणनीतिक व कार्यनीतिक लाइन की रूपरेखा संबंधी दस्तावेज ही एम.सी.सी.आई. की राजनीतिक व व्यावहारिक सोच की ठोस अभिव्यक्ति है

1964 में, अविभाजित कम्युनिस्ट पार्टी से अलग होने की प्रक्रिया में सी.पी.एम. की सातवीं कांग्रेस के समय से ही सी.पी.एम. की संशोधनवादी लाइन के खिलाफ विद्रोह का जो झंडा बुलंद कर उससे नाता तोड़ दिया गया था, उसके बाद ही यह सवाल सामने आया कि भारतीय क्रान्ति की सही लाइन क्या होगी ? भारतीय क्रान्ति का स्तर व मार्ग क्या होगा और क्रान्ति के दोस्त व दुश्मन कौन होगा, इत्यादि-इत्यादि।

वस्तुतः, उक्त सवालों का हल निकालने हेतु 1965 में प्रकाशित 'चिंता' नामक दस्तावेज [जो गुप्त रूप से तत्कालीन सी.पी.आई.(एम) पार्टी के अंदर संशोधनवाद के विरूद्ध संघर्ष को जोरदार करने हेतु निकाली जाती थी और 'चिंता' नाम से छः दस्तावेजों का प्रकाशन हुआ था] के जरिए एक कोशिश की गई थी, बाद में, 1966 में 'दक्षिण देश' नामक पत्रिका के जरिए भी संशोधनवाद के खिलाफ जोरदार राजनीतिक व सैद्धांतिक बहस चलायी जाती रही। पर एक सुसम्बद्ध लाइन के रूप में एक बुनियादी दस्तावेज की जरूरत को महसूस किया गया। उसी क्रम में, उक्त सवालों का हल निकालने का एक प्रयास के रूप में ही का. के.सी. ने भारतीय क्रान्ति की रणनीतिक व कार्यनीतिक लाइन की रूपरेखा संबंधी एक दस्तावेज (बहस के लिए) प्रस्तुत की। का. के.सी. ने इस दस्तावेज को बुनियादी तौर पर का. लेनिन के नव-उपनिवेशवादी थीसिस व राष्ट्रीयता संबंधी लेख, का. स्तालिन के राष्ट्रीयता संबंधी लेख व बोल्शेविक पार्टी के इतिहास, लेनिनवाद की समस्याएं और माओ नेतृत्वाधीन सी.पी.सी. द्वारा प्रकाशित महान बहस से संबंधित महत्वपूर्ण दस्तावेजों और खासकर अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की आम लाइन (14 जून की चिट्ठी) व नया उपनिवेशवाद के पैरोकार और माओ के नव जनवाद के बारे में, चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण, चीनी क्रान्ति व

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी तथा सैनिक मामले पर महत्वपूर्ण लेखों – इत्यादि पर आधारित होकर बनाया था।

का. के.सी. द्वारा प्रस्तुत की गई इस दस्तावेज के जरिए ही सी.पी.आई. व सी.पी.एम. संशोधनवाद के साथ राजनीतिक तौर पर एक साफ विभाजन रेखा खींची गई। रणनीति-संबंधी दस्तावेज के दौरान जिन राजनीतिक बिन्दुओं पर साफ विभाजन रेखा खींची गई, वे हैं :

(क) विश्व क्रान्ति की अभिन्न धारा में भारतीय क्रान्ति

(ख) आज का भारतीय समाज : (i) साम्राज्यवाद क्या खत्म हो चुका है; साम्राज्यवाद और व्यापक जनता के बीच के विरोध के बारे में; (ii) भारत की राजनीति; (iii) क्या सामंतवाद खत्म हो चुका है? सामंतवाद और व्यापक जनता के बीच के अन्तरविरोध के बारे में; (iv) आज की भारतीय संस्कृति।

(ग) आज के भारतीय राष्ट्र-व्यवस्था का चरित्र

(घ) भारतीय समाज व्यवस्था व सामाजिक संकट

(ङ) भारतीय क्रान्ति का चरित्र; भारतीय क्रान्ति के दो स्तर

(च) राष्ट्रीय क्रान्ति व जनवादी क्रान्ति के आंतरिक संबंध व नेतृत्व के बारे में

(छ) जनवाद के बुनियादी कर्तव्य : (i) जनवादी राष्ट्र व राजनीति – इस विशेष राष्ट्र व्यवस्था की विशेषताएँ; (ii) जनवादी अर्थनीति; (iii) जनवादी संस्कृति।

(ज) राष्ट्रीयताओं की एकता की बुनियाद

(झ) क्रान्ति का मार्ग – लोकयुद्ध के दरमियान राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करना ही क्रान्ति का केन्द्रीय कर्तव्य है, अध्यक्ष माओ प्रदर्शित दीर्घकालीन लोकयुद्ध का रास्ता ही भारत की मुक्ति का रास्ता है।

(ञ) वास्तविक परिस्थिति की विशेषताएँ ही भारत के लोकयुद्ध के दीर्घकालीन चरित्र को निर्धारित करती है।

(ट) चुनाव की धोखेबाजी का नकाब खोल दें, दीर्घकालीन लोकयुद्ध का मार्ग पकड़ें

(ठ) क्रान्ति के तीन हथियार

(ड) महान भारतीय क्रान्ति का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व फिर, कार्यनीति संबंधी दस्तावेज के दौरान जिन बिन्दुओं पर संशोधनवादियों के साथ एक विभाजन रेखा खींची गई थी, वे हैं :

(क) शस्त्र-बल द्वारा राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करना ही क्रान्ति का केन्द्रीय कर्तव्य है।

(ख) रूस देश की क्रान्ति का मार्ग अथवा चीन देश की क्रान्ति का मार्ग ? महान चीनी क्रान्ति का मार्ग ही भारत की नयी जनवादी क्रान्ति का मार्ग है।

(ग) विशाल देहाती इलाके ही दुश्मन के सबसे कमजोर स्थल हैं – क्रान्ति का तूफानी केन्द्र। किसान जनता ही क्रान्ति का सबसे दृढ़ दोस्त है, कृषि क्रान्तिकारी संग्राम ही है किसान जनता को लोकयुद्ध में शामिल करने की मूल कुंजी।

(घ) दीर्घकालीन लोकयुद्ध को कायम करना ही तमाम कामों का केन्द्र बिन्दु है, जन फौज और देहाती इलाकों में आधार क्षेत्र गठन करना ही वर्तमान समय का प्राथमिक, प्रधान और केन्द्रीय कार्य है।

(ङ) देहाती इलाकों के कामकाज को ही प्रधानता देनी होगी। गाँव और शहर के कामकाज के बीच के सही संबंध के बारे में, शहर के कामकाज की लाइन के बारे में।

(च) लोकयुद्ध तथा जनफौज ही संग्राम व संगठन का प्रधान रूप है, संग्राम तथा संगठन के मुख्य तथा गौण रूपों के बीच का संबंध।

(छ) वर्ग लाइन और जन लाइन को मजबूती के साथ गिरफ्त में रखें, मजदूर वर्ग और गरीब व भूमिहीन किसानों को केन्द्रित कर कामकाज करें।

दरअसल, एम.सी.सी.आई. की राजनीतिक सोच और व्यावहारिक कार्य से संबंधित एक ठोस अभिव्यक्ति है का. के.सी. द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त रणनीति व कार्यनीति संबंधी दस्तावेज।

सोनारपुर का संघर्ष और हमारा प्रारम्भिक अनुभव

सैद्धांतिक संघर्ष अगर वास्तविक कामकाज के साथ युक्त नहीं होता है, तब एक ओर वह जैसे अर्थहीन हो जाता है, दूसरी ओर फिर सिद्धांत के बारे में सही–सही समझदारी भी पैदा नहीं हो सकती। अलावे, वास्तविक संघर्ष को बाद देकर सैद्धांतिक संघर्ष ज्यादा दूर तक आगे भी नहीं बढ़ सकता, विस्तार भी नहीं हो सकता और संशोधनवादियों को पूरे तौर पर अलग–थलग करना भी संभव नहीं है। इसीलिए, तत्कालीन समय में, सैद्धांतिक संघर्ष के जरिए अपनी ताकतों को थोड़ा–बहुत समेट लेने के साथ हम अपनी छोटी ताकत को लेकर ही देहाती क्षेत्र में गुरिल्ला युद्ध के लिए किसानों को जागरूक व संगठित करने के काम में ध्यान केन्द्रित किये। सोनारपुर में ही पहला संपर्क मिला इसीलिए वहीं से कामकाज की शुरूआत की गयी।

सोनारपुर में संगठन बन उठने और उसे कुछ हद तक ठोस व दुरूस्त बना पाने के पहले ही दुश्मन उस पर हमला शुरू किया। ऐसी स्थिति में, मूलतः आत्मरक्षार्थ पीछे हटने की पद्धति के अलावा दूसरी कोई कार्यनीति अपनानी संभव नहीं थी। परिणाम के दृष्टि से और गुणगत दृष्टि से सोनारपुर का संघर्ष उन्नत स्तर पर नहीं पहुंच पाया।

फिर भी , सोनारपुर में प्रत्यक्ष रूप से कामकाज करने के कारण ही हमारे लिए, वर्ग विश्लेषण, किसान समस्या और कृषि क्रांति के सवाल को अपेक्षाकृत बढ़िया से समझ पाना संभव हुआ था। साथ ही हमने यह भी समझ पाया कि, (क) राजसत्ता कब्जा करने के लिए ही क्रांतिकारी सशस्त्र संघर्ष का निर्माण व विकास करना चाहिए और इसलिए संशोधनवाद की ठोस अभिव्यक्तियों के विरूद्ध यानी अर्थवाद, जंगी अर्थवाद, कानूनवाद, सुधारवाद, वोटवाद आदि के विरूद्ध लगातार सैद्धांतिक व विचारधारात्मक संघर्ष चलाना चाहिए; (ख) हमारे देश में जहां जन संगठन व जन आन्दोलन के नाम पर दीर्घदीन से ही संशोधनवादी धारा जारी है, वहां इसके विपरीत, शुरू से ही पार्टी की बुनियादी आधार के बतौर गुप्त सक्रिय कार्यकर्ता ग्रुप और उसे केन्द्रित कर सशस्त्र गुरिल्ला इकाई व जन मिलिशिया गठन पर जोर देते हुए और पार्टी को गुप्त रखते हुए व्यापक जनता के बीच कामकाज चलाने की पद्धति को ही अमल में लाना चाहिए तथा सशस्त्र संघर्ष के सहायक जन संगठन व जन आन्दोलन का निर्माण करना व सशस्त्र प्रतिरोध संघर्ष तथा राजसत्ता कब्जा करने हेतु सशस्त्र संघर्ष का निर्माण करने पर विशेष जोर देना और ऐसे संघर्ष का निर्माण के जरिए जनता की सशस्त्र शक्ति (आत्मरक्षा दल, जन मिलिशिया व गुरिल्ला दस्ता) का निर्माण करने पर विशेष जोर देना चाहिए; (ग) देहाती क्षेत्र में सशस्त्र संघर्ष का निर्माण व विकास करने की अनिवार्य शर्त के रूप में गरीब व भूमिहीन किसानों के बीच से कैडर व नेतृत्वकारी ग्रुप तैयार करना और गरीब व भूमिहीन किसानों पर ही सबसे ज्यादा निर्भर करना चाहिए; (घ) देहाती क्षेत्र के सशस्त्र संघर्ष में किसान महिला तथा मेहनतकश महिलाओं को सचेत, संगठित व शामिल करने के महत्व को समझना आदि-आदि।

सोनारपुर लड़ाई का सबक लेकर ही कांकसा- गया-हजारीबाग के क्रांतिकारी संघर्ष को आगे बढ़ाया गया

सोनारपुर की लड़ाई से हमने जो सबक सिखा वह यह है कि भारत जैसे विशाल व राजनीतिक व आर्थिक असमानता वाला देश में तथा दुश्मन काफी शक्तिशाली और हम कमजोर हैं- इस पृष्ठभूमि में हमारे लिए सुविधाजनक या अनुकूल कुछ रणनीतिक इलाके में काम करना बहुत ही जरूरी है। इसीलिए सोनारपुर में सशस्त्र कृषि क्रांतिकारी कामकाज

के दौरान कुछ प्राथमिक व प्रारंभिक अनुभव हासिल होने के बाद हमने कृषि क्रांतिकारी गुरिल्ला लड़ाई तथा दीर्घकालीन लोकयुद्ध की कार्यसूची की बुनियाद पर ही कुछ चुने हुए या रणनीतिक इलाकों में कामकाज शुरू किया। भारत की ठोस स्थिति की बात को ध्यान में रखते हुए ही इस समय राजनीतिक कर्तव्य को सैनिक क्रिया–कलापों के जरिए कैसे सफल बनाया जाएगा– यह प्रश्न हमारे सामने एक मुख्य प्रश्न के बतौर आया। इस प्रश्न का हल निकालने हेतु हमने कामरेड माओ की सैनिक रचनाओं के कुछ विशेष लेखों का अध्ययन करने पर ध्यान दिया। खासकर ऐसे लेख जिसमें फौज बनाने और आधार क्षेत्र बनाने की प्रक्रिया–पद्धति के बारे में एक सुस्पष्ट धारणा मिलेगी – अध्ययन करने पर विशेष बल दिया।

भारत में लम्बे अरसे से चला आ रहा सुधारवादी, अर्थवादी तथा संशोधनवादी आन्दोलन का धारा–प्रवाह के साथ हर एक मामले में यानी राजनीतिक–सांगठनिक और लड़ाई के लक्ष्य और रूप व पद्धति – हर मामले में एक सुस्पष्ट विभाजन रेखा खींचने की आवश्यकता हमने महसूस की। उसी सोच के तहत ही किसान आन्दोलन के लक्ष्य–उद्देश्य, दिशा व कार्यसूची के बारे में भी पुराना संशोधनवादियों के साथ एक सुस्पष्ट विभाजन रेखा हमने खींच लेने का तय किया। इस विभाजन रेखा को खींचते समय हमने सोवियत रूस की स्थिति और रूसी अनुभव और चीन की स्थिति व चीनी अनुभव को ध्यान में रखते हुए भारत की ठोस स्थिति में सशस्त्र क्रांति की दिशा व धारा के अनुसार किसान आनदोलन को कैसे आगे बढ़ाया जाएगा– इस पर बल दिया। उसी सोच और समझ के अनुसार 'सही किसानों के हाथ में जमीन' और 'क्रांतिकारी किसान कमिटियों के हाथ में राजनीतिक शासन व हुकूमत' इन दो नारों को किसान आन्दोलन के मामले में राजनीतिक अवधारणा से युक्त मूल नारों के बतौर तय किया गया।

इस दृष्टिकोण और इसके अनुसार कार्यपद्धति और कार्यशैली को अमल में लाकर ही काँकसा–गया–हजारीबाग आदि इलाके में क्रांतिकारी आन्दोलन और जन आन्दोलन का एक नया मार्ग व नयी धारा का विकास संभव होना शुरू हुआ है। उक्त लक्ष्य–उद्देश्य व दिशा से लैस होकर क्रांतिकारी किसान जनता तथा मेहनतकश जनता नये जोश–खरोश के साथ विभिन्न प्रकार के संघर्षों में शिरकत करना शुरू की। इस दौरान एक नये प्रकार के जन संगठन और जन आंदोलन का वे निर्माण किये हैं और अपने अनुभवों के आधार पर उनको क्रमिक रूप से विकसित किये हैं। ऐसा एक मार्ग एवं ऐसी एक धारा को उन्होंने चुन लिया है जिसने उनके अन्दर अपने अधिकार बोध व आत्मविश्वास को कई गुना बढ़ा दिया तथा यह बात उनको समझने में मदद कर रही है कि अपनी संगठित सशस्त्र शक्ति के बल पर ही अथवा

अन्य शब्दों में बन्दूक के बल पर ही जनता अपनी राजनीतिक सत्ता को कायम कर सकती है। वे क्रान्तिकारी संघर्ष की एक ऐसी विचारधारा और ऐसे-ऐसे कौशल, रूप व पद्धतियों को उत्साहित और प्रयोग किये हैं जिससे शासक गुट के कानून और हुकूमत को खत्म करके जनता का कानून और हुकूमत को कायम करने का रास्ता साफ हो सके। अभी वे खाद्य व रिलीफ के लिए अथवा अपनी मांग भीख जैसा मांगने के लिए बी.डी.ओ. अथवा एस.डी. ओ. अथवा किसी भी सरकारी ऑफिसर के पास कर-जोड़कर धरना देने नहीं जाते। शासक गुट अथवा सरकारी नौकरों के पास वे दया-भिक्षा के लिए नहीं जाते। वे निजी संगठित शक्ति के ऊपर भरोसा कर – कहा जा सकता है कि बन्दूक के बल पर ही – निजी समस्याओं का अपने से ही हल करने के लिए आगे बढ़े हुए हैं। दुश्मन से दया अथवा रिलीफ की भिक्षा मांगने के बदले वे अपनी संगठित सशस्त्र शक्ति के ऊपर भरोसा कर अपने अधिकार को छीन लेने का मार्ग व पद्धति अपनाए हुए हैं। संग्राम व संगठन के रूप में व पद्धति में वे भारी परिवर्तन लाए हैं। गांधीवादी, निरस्त्र, खुलेआम तथा कानूनी रूप व पद्धति के बदले, वे मुख्य रूप से सशस्त्र, गुप्त तथा गैर-कानूनी रूप व पद्धति के ऊपर जोर दिये हैं। जैसे गुप्त तरीक से – सशस्त्र रूप, छोटे-छोटे दलों में बंट कर जाल समेटने जैसा एक-एक जगह में वे तेजी से जमा होते हैं, अत्याचारी बड़े-बड़े वर्ग दुश्मनों के घरों पर अथवा उनके अड्डों के ऊपर अथवा उनके भाड़े के गुण्डा-दलों के ऊपर अचानक हमले चलाते हैं – फिर जाल फैलाने जैसा अपने को तुरन्त फैला देते हैं। शत्रु पक्ष के चलने-फिरने तथा गतिविधि पर तीखा जासूसी का काम चलाते हैं। सभी कामों में वे पार्टी का निर्देश मान कर चलते हैं। वर्ग दुश्मन व उनके दलाल बुरे-शरीफजादों से जब्त की गयी अथवा जुर्माना कर अदा की गयी खाद्य वस्तु के एक छोटे भाग को पार्टी में जमा देकर बाकी वे जनता के बीच बांट देते हैं। दुश्मन की जमीन से फसल जब्त करने पर भी एक ही तरह से बांट देते हैं। इसी तरह ही वे खाद्य समस्या को हल करने में जनता को मदद पहुँचाने की कोशिश करते हैं। जरूरत की तुलना में कम होने पर भी – इसमें जनसाधारण के अन्दर आत्मविश्वास पैदा होता है। दुश्मन से जब्त की गयी बन्दूकें, रुपया-पैसा अथवा सोना-चांदी को वे पार्टी में ही जमा देते हैं लड़ाई को आगे बढ़ाकर ले जाने के उद्देश्य से। वर्ग-दुश्मन व उनके स्थानीय दलालों को दंड देने के मामले में वे ''जैसा कुत्ता वैसा डण्डा' – इस नीति का पालन करते हैं। किसी को समझा-बुझाकर अपने पक्ष में लाने की कोशिश करना, किसी को धमकी देना, किसी को जनता की आलोचना में आना, किसी को पिटाई करना व साथ-साथ समझाना अथवा धमकी देना, फिर किसी को एकदम 'खत्म' कर देना। आम तौर पर जाने-पहचाने घोर अत्याचारी को ही – विशेषकर जो गुण्डों

की मदद अथवा पुलिस की सहायता से जनसमुदाय के ऊपर अत्याचार चलाते अथवा जब तब महिलाओं को बे-इज्जत करते अथवा क्रान्तिकारियों को पुलिस से पकड़वाने का या हत्या करने का षड़यंत्र करते हैं, उन्हीं को ही तथा जनसाधारण की राय के अनुसार ही मृत्यु-दण्ड दिया जाता है। धमकी देने अथवा जरूरत के अनुसार चुनकर दो-चार बदमाश जंगल पुलिस की पिटाई करने के फलस्वरूप अनेक जंगल इलाकों में जंगल-पुलिस जाने की हिम्मत ही नहीं करती। फिर आस-पास में दूसरी जगहों में भी उनका शोषण, जुल्म आगे जैसा बे-परवाह रूप से चलता नहीं। लड़ाकू इलाकों में तो है ही, ऐसा कि नजदीक के इलाकों में भी किसानों को यथोचित सम्मान देकर बातें बोलनी पड़ती है। किसी-किसी लड़ाकू इलाकों के बड़े-बड़े अत्याचारी वर्ग-दुश्मनों ने प्राण के भय से गांव से भागकर नजदीकी छोटे शहरों में आश्रय लिया है तथा वहां से ही दलाल, गुण्डे व पुलिस की सहायता से अपने शोषण व जुल्म के राज को बरकरार रखने की कोशिश चलाते हैं। वस्तुत: जितने दिन बीतते जा रहे हैं उतने ही वर्ग-दुश्मन लोग पुलिस-मिलिटरी के ऊपर अधिक से अधिक निर्भरशील हो रहे हैं।

किसानों के ऐसे नये रूप के जन-आन्दोलन तथा लाल प्रतिरोध लड़ाई की लोकप्रियता तथा व्यापक से व्यापक इलाकों में इस रूप की लड़ाई के फैलने की आशंका से ही शासक गुट की आंखों से नींद हराम हो गयी, नींद हराम हो गयी पुलिस तथा शासन-यंत्र की आंखों से। एक ओर वे संग्राम को जबरन कुचलने के लिए व्यापक रूप से पुलिस कैम्प कायम करते हैं तथा घेराव व दमन अभियान चलाते हैं। एक-एक इलाके के गाँव-गाँव में, घर-घर में घुसकर वे बे-विचार अत्याचार व गाली-गलौज करते हैं, महिलाओं की इज्जत लूटते हैं, सम्पत्ति की बर्बादी करते हैं, मुर्गी, बकरी से शुरूकर घर-गृहस्थी की जरूरी चीजें छीनते हैं। माल कुर्की करते हैं, मर्द हो या औरत सबों पर ही बर्बर रूप से मार-पीट करते हैं, व्यापक रूप से मार-पीट व गिरफ्तारी चलाते हैं और ऐसा कि सुनियोजित ढंग से षड़यंत्र कर क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं की हत्या करते हैं – ये सभी वे करते हैं विधि-व्यवस्था की रक्षा करने के नाम से, शान्ति रक्षा करने के नाम से। साथ ही साथ लड़ाई को नष्ट करने के लिए वे अन्य विभिन्न तरह के घृणित तरीके भी प्रयोग करते हैं। विभिन्न तरह के प्रलोभन दिखलाकर जैसे -जमीन देने का, अच्छे कानून बनाने का, रुपए देने का, नौकरी देने का, पम्प लगाने का, कुआं बनवाने का, स्कूल बनवाने का इत्यादि विभिन्न तरह के लोभ दिखला कर वे किसानों को लड़ाई से अलग-थलग करने की कोशिश करते हैं। जातिवादी व वर्णविषमता का उकसावा देना, गुटवादी व राष्ट्रवाद की संकीर्णता को उकसाना, जिलावाद से शुरूकर प्रादेशिकता व विभिन्न रूपों की प्रान्तीयतावादी या इलाकावादी विचारधाराओं को उकसावा

देना या तूल देना इत्यादि विभिन्न घृणित तरीकों से लड़ाकू जनसाधारण के अन्दर भेदभाव पैदा करते हैं, लड़ाई के अन्दर से नष्ट करने की कोशिश करते हैं फिर, पुलिस के जुल्म व अत्याचार का डर–भय दिखलाकर लड़ाकू जनसाधारण के मनोबल को दुर्बल कर देना तथा इसी मौके पर लड़ाकू जनता को दुश्मन के सामने आत्म–समर्पण का उकसावा देना एवं लड़ाई को वही पुराने रूप की गांधीवादी सुधारवादी मार्ग में धकेलना – क्रान्तिकारी मार्ग से दूर हटाकर जनसाधारण को फिर वही निरस्त्र कानूनी लड़ाई की दलदल में फंसा देना – यह सभी करते हैं शासक गुट व उसके पीट्ठू लोग। किन्तु इनकी इन सभी कुचेष्टाओं का अन्त में विफल होना निश्चित है। सशस्त्र क्रान्ति की जो मशाल भारत की जनता ने उठा ली है उसे कोई शक्ति ही बुझा नहीं पा रही है और न बुझा पायेगी।

हमारी प्रधान कमजोरी है कि हमारी जनता अभी बहुत कम सक्रिय और बहुत कम संगठित है। हमारे संघर्ष के इलाके भी बहुत छोटे हैं। दुश्मन के हाथ में सुसंगठित पुलिस और सेनावाहिनी है। असंगठित हालत में हम दुश्मन की सुसंगठित पुलिस और सेना का मुकाबला कर नहीं सकते। फिर विशाल इलाकों के सिवाय दुश्मन की हथियारबन्द वाहिनी के खिलाफ गुरिल्ला–युद्ध चलाना भी सम्भव नहीं है।

इसीलिए कमजोरियों को जहां तक सम्भव हो, बड़ी तेज गति से दूर करना होगा। प्रचार आन्दोलन को और ज्यादा सृजनात्मक और उन्नत करना होगा। कार्यकर्ताओं और जनता की राजनीतिक शिक्षा, संग्रामी मनोबल और सक्रियता को कई गुणा ज्यादा बढ़ाना होगा। गुरिल्ला युद्ध का निर्माण तथा गुरिल्ला युद्ध के सहायक जन–संघर्ष और लाल प्रतिरोध संघर्ष के निर्माण के साथ–साथ संग्राम को जितना दूर सम्भव हो लहरों की तरह फैला देना होगा। संग्राम के उपयोगी जन–संगठनों का निर्माण करना होगा। जिन्हें संगठित किया जा सके उन्हीं को लेकर ही क्रान्तिकारी किसान कमिटी का निर्माण करना होगा। एक प्रक्रिया के दौर से जनता की हुकूमत के भ्रूण के रूप में क्रान्तिकारी किसान कमिटियों का निर्माण करना होगा। निर्माण करना होगा पार्टी संगठन का। संग्राम की बढ़ती हुई गति एवं कार्यकर्ताओं और आम जनता की चिन्ता, चेतना तथा लड़ाकू मिजाज के साथ तालमेल रखकर सृजनात्मक तरीके से, इन सब संगठनों का निर्माण करना होगा एवं क्रमिक रूप से इनको विकसित करना होगा। हमें यह अवश्य ही समझना होगा कि हमारी राजनीतिक और मिलिटरी–लाइन के साथ तालमेल रखकर संगठनात्मक जो लाइन है उसको सही रूप से प्रयोग में न लाने से, राजनीतिक और सांगठनिक लाइन भी नाकामयाब होने के लिए बाध्य है। क्रान्तिकारी प्रचार, क्रान्तिकारी संघर्ष और क्रान्तिकारी संगठन – इन तीनों के बीच के आपसी सम्बन्ध को न समझने से एवं एक

ही साथ इन तीनों कामों को सृजनात्मक तरीकों से तथा मजबूती के साथ निर्माण न कर पाने से हमलोग सार्विक रूप से ही क्षतिग्रस्त होंगे। आत्मरक्षा और जवाबी हमले की राजनीति देने के साथ-साथ हमलोगों के सामने एक अत्यंत महत्वपूर्ण काम है जनता को सक्रिय और पहलकदमी से भरपूर बना देना एवं उनको ऊपर में लिखे तीन संगठनों में सुव्यवस्थित तथा अनुशासनबद्ध वाहिनी के रूप में संगठित करना और हथियारबन्द करना।

कांकसा संघर्ष के तीन ज्वार

कांकसा के संघर्ष का एक धारावाहिक इतिहास है। सन 70-71 से यह शुरू हुआ। '70 में कुछ-कुछ आर्थिक व राजनीतिक संघर्ष छिट-पुट रूप से शुरू हुआ।' 71 के फरवरी-मार्च से जून-जुलाई तक कई आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष कांकसा थाना कमिटी के नेतृत्व में किये गये। इन लड़ाइयों में जनता की अच्छी भागीदारी रही। किन्तु इस समय की लड़ाइयों में मुख्य-मुख्य कमियाँ क्या थीं ? 1) राजनीतिक गोलबन्दी के कार्य को और अच्छी तरह करने में कमी, 2) सांगठनिक तैयारी का अभाव एवं कुछ हद तक स्वयंस्फूर्त रूप से लड़ाई में उतरना, 3) विभिन्न रूपों के प्रोग्रामों की धारावाहिकता एवं सार्विकता का अभाव, 4) गुरिल्ला कायदा-कौशल अपनाने की कमी इत्यादि।

मूलत: 72 की फरवरी से जो संघर्ष शुरू हुआ उसने एक ज्वार पैदा किया। मुख्यत: यह संघर्ष कांकसा थाना क्षेत्र में सीमित था। 72 के फरवरी से 73 की जनवरी तक यह ज्वार इस क्षेत्र में चरम पर था। इसके साथ उल्लेखनीय है कि 72-73 की फसल रक्षा व फसल जप्ती की लड़ाई पहले पहल आउस ग्राम के एक छोटे से अंचल में शुरू हुई।

73 में कांकसा में थोड़ी-बहुत लड़ाई होने के बावजूद मूलत: संघर्ष का ज्वार आउसग्राम-बुदबुद थाना क्षेत्र में ही था। 73 के मार्च-अप्रैल से ही शुरू करके अक्टूबर-नवम्बर तक यह लड़ाई एकदम शीर्ष पर थी।

बाद के संघर्ष का ज्वार 74 के मार्च से 75 के जून तक चला। यानी व्यापक मिलिटरी के लगातार घेराव व दमन के पहले तक। इस अवधि में कुछ-कुछ लड़ाई होने के बावजूद मुख्यत: आउसग्राम व बुदबुद में ही संघर्ष का ज्वार चरम पर था।

अत: संघर्ष के ज्वार के हिसाब से तीन समयावधियां चुन ली जाती हैं। इन्हें हम संघर्ष के तीन ज्वार के तौर पर ही चिन्हित करते हैं।

स्क्वायड गठन संबंधी अनुभव के सकारात्मक पहलुओं पर

✶ पहले, सैन्य-गठन के संबंध में एक नजरिया बन रहा था और वास्तविक समझदारी हासिल हो रही थी। 'फौज' क्यों बनानी होगी, कौन-कौन इस 'फौज' में शामिल होंगे? किस तरह, किस प्रक्रिया से यह 'फौज' गठित हो सकती है, 'दस्ते' क्यों बनाये गये – के संबंध में क्रमशः सही धारणा बनी।

कॉमरेडो! पूरे इलाके की जनता और कार्यकर्ताओं में इस बारे में एक उत्साहवर्द्धक वातावरण तैयार हुआ।

प्रायः प्रत्येक गाँव से कार्यकर्ता आये हैं। घर-बार छोड़-छाड़कर दस्ते में शामिल होने की मानसिकता मानो एक उत्सव है।

इस मानसिकता में स्वतःस्फूर्तता एकदम नहीं था – यह नहीं कहूँगा। किन्तु यह स्वयंस्फूर्तता ही विषय वस्तु का 'मूल' थी – यह तो कभी नहीं कहूँगा। कारण, बाद के वर्षों की घटनावली से हमें यह आत्मविश्वास अर्जित करने में और भी सहायता मिली कि किसी भी इलाके में 'सशस्त्र कृषि विप्लवी' राजनीति के आधार पर काम करने पर, फौज बनाने का आह्वान करने पर एक फोर्स को अवश्य ही संगठित किया जा सकता है।

✶ दुश्मन के प्रचंड षड्यंत्र और प्रतिहिंसामूलक आक्रमण के समय में चलायमान दस्ता गठित करना बहुत कारगर और समयोपयोगी होता है।

✶ संगठित रूप से प्रचार कार्य चलाने में सुविधा होती है। स्थानीय कार्यकर्ताओं को दस्ते के आकार में गाँव-गाँव जाकर मीटिंग करने की रीति भी बनती है। हर काम में स्क्वायड हर चीज में अनुशासन – सभी कोई इस मिशाल से सीखते हैं।

✶ युद्ध-संचालन में भी इस चलायमान दस्ते की एक निर्भरयोग्य, शक्तिशाली और अहम भूमिका होती है। लड़ाई के दौरान 'बोल्शेविक स्पिरिट' तैयार करके व्यापक जनता को अनुशासति रूप से किस तरह लड़ाई में उतारा जाता है, ग्राम आधारित मिलिशिया दस्तों को किस तरह साहसी और अनुभवी बनाया जाता है – यह सब चलायमान दस्ते की उज्ज्वल भूमिका बखूबी सिद्ध हुई है।

✶ धूप-वर्षा, ठंढ, रोज पैदल चलने का कठिन परिश्रम, पैदल चलने के लिए

विशेष गुप्त रास्ता खोज निकालना और उसी तरह चलना, प्रचलित रास्तों को छोड़कर नये रास्ते से चलना और जंगल में स्थित दुर्गम स्थानों का उपयोग करना अथवा पार होना, बगैर रोशनी के रात में पैदल चलना, मीटिंग करके रातोंरात एक इलाके से दूसरे इलाके में जाना, भारी वर्षा से भरी नदी को तैरकर पार करना, पुलिस-कैम्प, घेराव और प्रचंड चौकसी के बीच भी काम बढ़ाते जाना, हर परिस्थिति का मुकाबला करना – ये मानसिकता और अभ्यास कैसे बनेंगे?

चलायमान दस्ता बनाने के फलस्वरूप ही ऐसा सकारात्मक विकास होना संभव है।

काँकसा लड़ाई की कमी व शिक्षा

'72 के संग्राम और संगठन की कमियाँ और दुर्बलताएँ सांगठनिक लाइन के सन्दर्भ में (पार्टी, फौज, कमिटी)।

'72 संग्राम की समीक्षा करके '73 के अगस्त में जोनल कमिटी की मीटिंग हुई और उस मीटिंग में जो निर्णय लिया गया, उसमें उल्लेख किया गया – ''केवल पार्टी की कोशिश ही पर्याप्त नहीं है। पार्टी की कोशिश के साथ जनता का भी तालमेल बिठाना जरूरी है। क्रान्ति के तीनों हथियारों – पार्टी, फौज (नियमित सेना, स्थानीय गुरिल्ला फौज और मिलिशिया) और किसान कमिटी का गठन करना होगा।'' गाँव-गाँव, इलाके-इलाके में 'किसान कमिटी' और 'मिलिशिया दस्ते' तैयार करने और उसे विशिष्ट रूप देने का भी निर्णय लिया गया अर्थात् '73 की समीक्षा में ''सांगठनिक लाइन'' के बारे में विस्तार से चर्चा हुई और निर्णय लिये गये।

स्थानीय व आंचलिक स्तर का पृथक कार्यक्रम नहीं, बल्कि ''एक ठोस कृषि क्रान्तिकारी कार्यक्रम'' बनाने का भी निर्णय लिया गया। कारण, इस तरह के कार्यक्रम का भी अभाव था।

पार्टी कमिटी में ''कार्यसूची'' बनाना या अनुमोदन नहीं, बल्कि ग्राम स्तर और अंचल स्तर पर गठित किसान कमिटी ही आन्दोलन की कार्यसूची बनाएगी (जो व्यापक जनता की सहायता और विचार-विमर्श के द्वारा ही बनायी जाएगी)। पार्टी केवल इन कार्यों पर नजर रखेगी गाइडलाइन देगी, सहायता करेगी। किसान कमिटी के स्थान पर पार्टी को कभी बिठाया नहीं जाता। ऐसा करने पर न केवल जनता का प्रयास बल्कि संघर्ष और संगठन का विकास भी बाधित होता है। अवश्य, किसान कमिटी में ही पार्टी के सदस्य रहेंगे और वहीं होंगे किसान कमिटी के साथ पार्टी के वास्तविक ''सांगठनिक संपर्कसूत्र''। ग्रामांचल में पार्टी यूनिट

किसान-कमिटियों और दूसरे जनसंगठनों के अगुआ लोगों का मिलन बिन्दु होगा।

'72 में ही 'किसान कमिटियों' को गठित करने या निर्दिष्ट रूप देने का उत्कृष्ट समय था, परन्तु उस वक्त साधन रहने के बावजूद इस गठन की ओर हमारी दृष्टि नहीं थी। हमने केवल पार्टी-कमिटी की ही बात सोची। ('72 के संग्राम के बारे में भी ऐसा ही कहा जा सकता है)। '72 में इस समीक्षा के द्वारा किसान कमिटियों के गठन का निर्णय लिया गया किन्तु इस निर्णय को साकार नहीं कर सके (साकार करना तो '75 से शुरू हुआ)। राजनीतिक और सांगठनिक लाइन के संबंध में जानकारी की हममें यही थी कमी; क्रान्ति के तीनों हथियारों – पार्टी, फौज, 'किसान कमिटी' बनाने और प्रक्रिया के संबंध में सही-सही जानकारी का अभाव।

व्यापक जनता ने संघर्ष में भाग लिया है – यह बात सही है। लेकिन ग्राम आधारित मिलिशिया के रूप में, संगठित यूनिट के आकार में उसने भाग नहीं लिया है। गाँव से व्यापक जनता संग्राम के लिए एकत्रित होती थी। इसके बाद 'दस्ते' बनाये जाते। यह संगठन और संघर्ष की एक दुर्बलता थी। मिलिशिया दस्ते जैसे नियमित एवं निर्दिष्ट स्क्वायड के आकार में कामकाज चलाते हुए 'सुसंबद्ध', दृढ़ और अधिक अनुशासित' रूप ले सके, इसका कोई सचेत प्रयास शुरू में काफी दिनों तक नहीं हुआ। ग्राम आधारित मिलिशियाएँ असंगठित और ढीलेढाले रूप में थीं। किसी-किसी गाँव में 'मिलिशिया' स्वरूप मौजूद रहने के बावजूद उसे सचेत और दृढ़ राजनीतिक व सांगठनिक स्वरूप देने की चेस्टा नहीं की गयी।

इलाका विस्तार और मूल इलाके के अंदर राजनीतिक व सांगठनिक तैयारियों के काम को ठीक ढंग से पूरा नहीं कर पाने यानी उसमें भारी कमी रह जाने के कारण ही काँकसा लड़ाई अस्थायी तौर पर पीछे हटने में मजबूर हुई। यह हमारा कटू अनुभव है।

तत्कालीन बिहार के अन्तर्गत गया-हजारीबाग की लड़ाई की शिक्षा

समय के अनुसार इलाका विस्तार के काम को आगे बढ़ा पाना तथा इलाके के अंदर भी राजनीतिक व सांगठनिक तैयारी यानी पार्टी, फौज व संयुक्त मोर्चा संबंधी तैयारियों के काम को ठीस समय पर पूरा न कर पाना काँकसा की लड़ाई के इस अनुभव को ध्यान में रखकर ही गया-हजारीबाग तथा तत्कालीन बिहार में क्रान्तिकारी संघर्ष को और व्यवस्थित व योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ाने की कोशिश की गई।

तब तक फौजी विषयक मामले में हमारे अंदर यह समझदारी पैदा हो गई थी कि सैनिक क्रियाकलापों को सही ढंग से संचालन हेतु यानी कभी आगे बढ़ना तो कभी पीछे हटना अथवा कभी एक पार्श्व में (साईड में) जाना तो कभी दूसरा पार्श्व में (या साईड में) जाना आदि क्रियाकलाप या गतिविधियों का संचालन हेतु कमोबेश एक लम्बा-चौड़ा (या विस्तृत) इलाके का होना आवश्यक है।

बाद में, इस सोच का ही व्यावहारिक रूप है – बिहार-बंगाल स्पेशल एरिया कमिटी।

जो भी हो, तत्कालीन धनबाद व हजारीबाग क्षेत्र (तत्कालीन हजारीबाग जिला के अंदर ही चतरा, गिरिडीह और कोडरमा जिला शामिल था, फौज व आधार-क्षेत्र निर्माण करने की ठोस दिशा को आगे बढ़ाने के दृष्टिकोण से 1969 के बीच-बीच से और गया क्षेत्र (तत्कालीन गया के अंदर ही मौजूदा औरंगाबाद, जहानाबाद, नवादा, आदि जिला अंतर्भूक्त था) में 1968 के शेषार्ध से ही कामकाज की शुरूआत हुई।

हजारीबाग व गया – इन दो क्षेत्र में से एक यानी हजारीबाग एक पहाड़-जंगल से भरा हुआ और आदिवासी बहुल व राष्ट्रीयता आन्दोलन अथवा अलग झारखण्ड आंदोलन से प्रभावित इलाका रहा है; और दूसरा गया एक विशाल मैदानी क्षेत्र (जिसमें थोड़ा-सा पहाड़ व जंगल क्षेत्र भी है) है जो कि क्रूर सामंती प्रथा से प्रभावित इलाका रहा है।

सन् 1971 से ही धनबाद और हजारीबाग के पारसनाथ व जिलगा पहाड़ और बड़कागाँव के नेरी-महूदिया पहाड़ व उसके आस-पास के इलाके में सशस्त्र कृषि क्रान्तिकारी गुरिल्ला संघर्ष का बिगुल बज उठा। वैसे ही सन् 1972 के शेषार्ध से गया इलाके के चाल्हो पहाड़ व उसके इर्द-गिर्द इलाके में कृषि-क्रान्तिकारी गुरिल्ला संघर्ष की लाल मशाल जल उठी।

हजारीबाग इलाके की लड़ाई में आदिवासी जनता सहित गैर-आदिवासी जनता द्वारा व्यापक रूप से शिरकत करने के कारण एक क्रान्तिकारी उभार जैसी स्थिति का सृजन हुआ। इस पिछड़ा हुआ व आदिवासी बहुल क्षेत्र के क्रान्तिकारी संघर्ष को देखकर दुश्मन घबड़ा उठा। शुरू हुई बर्बर 'घेराव व दमन' मुहिम। हमारी ओर से भी शुरू हुई उक्त 'घेराव व दमन' अभियान को विफल करते हुए आगे बढ़ने की प्रक्रिया। 1974 में 'घेराव व दमन' मुहिम और तीखी व तीव्र हुई तथा कई कामरेड शहीद हुए और कुछ नेतृत्वकारी कामरेड गिरफ्तार हो गए। फलतः, थोड़े दिनों के लिए लड़ाई पीछे हटने में विवश हो गयी।

पर, एक-दो वर्ष के अंदर ही नए सिरे से और नयी योजना के अनुसार हजारीबाग

(अभी का हजारीबाग, गिरिडीह, कोडरमा, चतरा) व धनबाद (अभी का बोकारो जिला को लेकर) के एक बड़ा क्षेत्र को लेकर कामकाज को आगे बढ़ाया जाने लगा। बहुत से नए-नए अनुभव हासिल होने लगा। खासकर, दुश्मन द्वारा चलाया जा रहा 'घेराव व दमन' मुहिम और हमारे द्वारा उसे विफल करते हुए लड़ाई को क्रमशः और विस्तार व ऊंचा स्तर में ले जाने का प्रयास – इस प्रक्रिया के दौरान राजनीतिक व सैनिक पहलू से लेकर सांगठनिक पहलू पर भी नया-नया अनुभव हासिल होने लगा।

उधर, गया इलाके की लड़ाई भी चाल्हो क्षेत्र को पार करते हुए अन्य अनेक स्थानों में फैल गई। सामन्ती भूस्वामी और उनके गुण्डों व निजी सेनाओं के खिलाफ दुनिया हिला देने वाली एक लड़ाई का जबरदस्त उभार हुआ। हजारों-हजार की संख्या में किसान जनता तथा मेहनतकश जनता इस क्रान्तिकारी संघर्ष में शिरकत कर पुरानी सड़ी-गली व्यवस्था को चकनाचूर करते हुए नयी व्यवस्था यानी जनता की एक जनवादी व्यवस्था का निर्माण हेतु दृढ़ कदम आगे बढ़ने लगी।

फौज व आधार क्षेत्र निर्माण करने के कर्तव्य को व्यावहारिक रूप देने हेतु ही स्पेशल एरिया गठन की सोच सामने आई

यद्यपि कि हमने बहुत पहले ही फौज व आधार क्षेत्र निर्माण के काम को प्राथमिक, प्रधान व केन्द्रीय कर्तव्य के बतौर तय किया, फिर भी इस कर्तव्य को सरजमीन पर कैसे साकार किया जाएगा – यह एक बड़ा सवाल के रूप में ही हमारे सामने मौजूद था। भारत की ठोस स्थिति अथवा ठोस विशिष्टता के अनुसार मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद [पहले की माओ त्सेतुङ विचारधारा] को अमल में लाने का व्यावहारिक रूप क्या होगा – यह भी एक बड़ा सवाल के बतौर हमारे सामने मौजूद था।

हमने महसूस किया कि इस गम्भीर सवाल का सही हल निकालने के लिए फौज व आधार इलाका संबंधी एक आम आवाज देना ही काफी नहीं है, बल्कि सचमुच ही फौज व आधार-क्षेत्र बनाने हेतु एक ठोस कार्यभार निर्धारित करना भी जरूरी है। इस ठोस कार्यभार को साकार करने के लिए भी जरूरी है कुछ रणनीतिक क्षेत्र को चुन लेना, जहां आर्थिक, राजनीतिक व सामरिक पहलुओं की ओर से एक स्वयंसम्पूर्ण आधार क्षेत्र का निर्माण किया

जा सके।

अत:, भारत की सरजमीन पर फौज व आधार क्षेत्र का निर्माण करने के लिए बिहार [अभी का बिहार–झारखण्ड] व बंगाल के [पश्चिमी मेदिनीपुर–बांकुड़ा–पुरूलिया] कुछ इलाके को रणनीतिक क्षेत्र के बतौर स्पेशल एरिया का चिंतन सामने आया।

1975 में ही स्पेशल एरिया का गठन करने हेतु प्रयास शुरू हुआ और 1976 के मध्य में ही बंगाल के काँकसा इलाके और तत्कालीन दक्षिण बिहार के धनबाद, गिरिडीह, हजारीबाग, गया, औरंगाबाद, नवादा आदि जिलों में कार्यरत कुछ नेतृत्वकारी कामरेडों को लेकर कामरेड कानाई चटर्जी की प्रत्यक्ष देखरेख व नेतृत्व में बिहार–बंगाल स्पेशल एरिया कमिटी का गठन किया गया।

स्पेशल एरिया का नाम देकर एक कमिटी के गठन के फलस्वरूप हमारे अंदर काफी सकारात्मक प्रभाव पड़ा। क्योंकि इस नामाकरण से हमारे अंदर क्यों स्पेशल एरिया और क्या इसका कार्यभार होगा, इसके बारे में काफी दिलचस्पी ला दिया। अत: फौज व आधार क्षेत्र बनाना और इसके लिए ही स्पेशल एरिया का गठन होना – यह एक साफ अवधारणा हमारे अंदर पैदा हुई। हमने समझ लिया कि स्वयंस्फूर्त ढंग से अथवा बिना योजना से अथवा बगैर रणनीतिक क्षेत्र की अवधारणा से हम फौज व आधार क्षेत्र बनाने संबंधी कामकाज को एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा सकते।

सच कहा जाए तो का. के.सी. की पहल व कुशल नेतृत्व में ही हम सबसे पहले पहला रणनीतिक क्षेत्र के बतौर असम और असम–त्रिपुरा के सीमावर्ती इलाके को और दूसरा राजनीतिक क्षेत्र के बतौर बिहार [अभी का बिहार–झारखण्ड] व बंगाल के कुछ अंशों को लेकर एक बड़ा क्षेत्र को चुन कर कामकाज शुरू किए।

हालांकि, असम में सार्विक तौर पर एम–एल आंदोलन में एक जबरदस्त धक्का के कारण हमारे लिए भी पहला रणनीतिक क्षेत्र के रूप में वहां के कामकाज को आगे बढ़ाकर ले जाना संभव नहीं है – ऐसा निष्कर्ष पर हमने पहुंचा। इसीलिए, का. के.सी. की सलाह के अनुसार यह निर्णय लिया गया कि अब दूसरा रणनीतिक क्षेत्र [बिहार–बंगाल क्षेत्र] को ही पहला रणनीतिक क्षेत्र के रूप में चुना जाए तथा वहीं पर शक्ति व सामर्थ्य के अनुसार फौज व आधार क्षेत्र निर्माण करने के काम को आगे बढ़ाने का सर्वाधिक प्रयास किया जाए।

का. के.सी. के निधन के बाद घरेलू और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में आए बदलाव के बारे में तत्कालीन एम.सी.सी.आई. की सी.सी. का स्टैण्ड

1982 के 18 जुलाई को हमारे नेता व शिक्षक का. के.सी. का निधन हुआ। का. के. सी. की मृत्यु हमारे लिए और भारतीय क्रान्ति के लिए एक बड़ी क्षति साबित हुई। ऐसा हमारा मानना है। इतने दिनों तक मूल राजनीतिक लाइन, विशेष लाइन तथा कार्यनीति संबंधी लाइन और उसके अनुसार कार्य-पद्धति व कार्य-शैली – ये सबकुछ ही का. के.सी. प्रस्तुत करते थे। अब का. के.सी. के निधन के बाद यह जिम्मा का. के.सी.-हीन सी.सी. पर आ पड़ा।

उक्त सी.सी. ने निम्नलिखित बातों को और एकबार घोषणा की। जैसे–

(i) महान माओ की मृत्यु के बाद 'चार गुट' के नाम पर जिन कामरेडों को गिरफ्तार किए गये थे, दरअसल वे सही कामरेड थे; इन चारों कामरेडों को जिस ढंग से गिरफ्तार किया गया वह हकीकत में एक प्रतिक्रांतिकारी कूदेता (राज्य विप्लव) थी; दरअसल, महान माओ की मृत्यु के तुरंत बाद हुआ-कूआ-फेङ और तेङ शियाओ पिङ गुट ने चार क्रांतिकारी कामरेडों को प्रतिक्रांतिकारी कूदेता (राज्य विप्लव) के जरिए गिरफ्तार करके समाजवादी चीन का रंग बदल दिया और चीन में पूंजीवादी अधिनायकत्व की स्थापना की;

(ii) अध:पतित तेङ शियाओ पिङ के तीन दुनिया के सिद्धांत को, वर्ग संघर्ष के त्यागने और समझौतापरस्त सिद्धांत के बतौर घोषित किया गया। [बाद में कुछ क्रांतिकारी ग्रुपों के साथ वार्ता के समय तीन दुनिया के सिद्धांत पर एम.सी.सी. का एक लिखित स्टैण्ड देने का आग्रह प्रकट करने पर हमारी ओर से ''तीन दुनिया के सिद्धांत एक प्रतिक्रांतिकारी सिद्धांत है'' – शीर्षक एक दस्तावेज प्रकाशित की गई जिसमें तीन दुनिया के सिद्धांत को खारिज किया गया]।

(iii) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर साम्राज्यवाद के साथ उत्पीड़ित जाति व जनता के अन्तरविरोध को ही निर्णायक व प्रधान अन्तरविरोध के रूप में ऐलान करना।

(iv) का. के.सी. जीवित रहने के समय में ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की 9वीं व 10वीं कांग्रेस की रिपोर्ट के बारे में हमारा स्टैण्ड को का. के.सी. की मृत्यु के बाद पुन: एकबार घोषणा करने की जरूरत को महसूस करते हुए सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व

के अधीन वर्ग संघर्ष को लगातार जारी रखने और समाजवादी निर्माण-कार्य को आगे बढ़ाने संबंधी 9वीं कांग्रेस की रिपोर्ट को आधारभूत रिपोर्ट और 9वीं व 10वीं कांग्रेस की रिपोर्ट एक-दूसरे का विपरीत नहीं – इस रूप से कहा गया है।

(v) मौजूदा युग के बारे में एक रणनीतिक अवधारणा के रूप में 9वीं कांग्रेस की रिपोर्ट द्वारा प्रस्तुत की गई व्याख्या को बहुत ही सही अवधारणा के बतौर मानने की जरूरत को बुलंद करना और साथ-ही-साथ माओ विचारधारा (अब माओवाद) के ऐतिहासिक उद्‌भव के बारे में 9वीं कांग्रेस द्वारा की गई व्याख्या को बुलंद करना।

(vi) 1990 के दशक में सोवियत रूस के विघटन के बाद हमने रूसी महाशक्ति को एक दुर्बल महाशक्ति के रूप में चिन्हित किया। पर, दुर्बल का अर्थ क्या है उसे ठीक ढंग से विश्लेषण नहीं किया गया। बाद में 2002 की सी.सी. की नवम्बर मीटिंग के दौरान रूस को दुर्बल महाशक्ति के रूप में चिन्हित करना सही नहीं हो रहा है – ऐसी समझ के बाद उसे एक शक्तिशाली साम्राज्यवाद जिसके पास नाभकीय हथियारों का एक विशाल जखीरा है के रूप में चिन्हित करने का निर्णय लिया गया।

जहां तक घरेलू स्थिति से संबंधित राजनीतिक विश्लेषण व राजनीतिक लाइन का सवाल है, उसमें : (1) राष्ट्र-चरित्र के बारे में मूल्यांकन वही रहा जो पहले से हम मानते आ रहे हैं। यानी भारत एक नव उपनिवेश ढंग का अर्द्ध-औपनिवेशिक व अर्द्ध-सामंती देश है; (2) भारत के दलाल व नौकरशाह बड़ा बुर्जुवाओं का कोई आपेक्षिक या आंशिक स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि वे साम्राज्यवाद का दलाल व सेवादास है। मोल-तोल करने की उसकी क्षमता उसके चरित्र में बुनियादी बदलाव लाने का लक्षण नहीं है, बल्कि दलाली के एवज में अपना जेब में कुछ ज्यादा पैसा भरने का लक्षण है, (3) चुनाव में हिस्सा लेने और न लेने के बारे में दृष्टिकोण न केवल कार्यनीति से संबंधित है, बल्कि ख्रुश्चेव संशोधनवाद का उदय और चुनाव के जरिए या शांतिपूर्ण रास्ते से समाजवाद में संक्रमण की बात की पृष्ठभूमि में, यह रणनीति के समतुल्य महत्व रखता है। (4) रूसी वर्चस्व के अधीन इंदिरा के जमाना के एकदम शेषार्ध में ही अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा भंडार से विशाल अंक की राशि का कर्ज लेने के जरिए अमेरिका के वर्चस्व बढ़ने लगा जो राजीव के जमाना में आकर और ज्यादा हुआ तथा एन. डी.ए. के समय में अमरीकी वर्चस्व ही मुख्य रूप लिया; (5) सी.पी.आई. (एम-एल)

लिबरेशन को आधुनिक संशोधनवादी और क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष विरोधी तत्व के रूप में खुली घोषणा की गई; (6) फौज व आधार क्षेत्र निर्माण करने के काम में लकीर के फकीर जैसे या घिसे-पिटे मनोभाव को अविलम्ब त्यागते हुए दृढ़तापूर्वक और सृजनात्मक ढंग से सामरिक लाइन, सामरिक संगठन व फौजी लड़ाई को और उन्नत व विकसित करने का निर्णय लिया गया।

दो-लाइन की बहस पार्टी-विकास की मूल कूंजी है

का. स्तालिन ने सी.पी.एस.यू. का इतिहास लिखते समय कहा कि सोवियत पार्टी का इतिहास दरअसल आंतरिक संघर्ष का इतिहास है और का. माओ ने पार्टी भी दो विपरीत चीज की एकता है – इस रूप से कहा।

हमारा अपना इतिहास पर नजर दौड़ाने से भी उक्त बातें सही प्रतीत होती हैं। जैसे : (a) सी.पी.एम. से संबंध तोड़ने के पहले सी.पी.एम. संशोधनवाद के खिलाफ तीखा दो-लाइन का संघर्ष; (b) सी.पी.एम. से संबंध तोड़ लिये जाने के बाद कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के बीच सही व गलत – इस दो-लाइन की बहस; (c) पार्टी गठन की प्रक्रिया-पद्धति लेकर एक चर्चा व बहस; (d) एम.सी.सी. गठित होने के समय सी.पी.आई.(एम-एल) पार्टी में शामिल होना चाहिए या नहीं – इस सवाल पर चर्चा व बहस; (e) 1970-71 के श्वेत आतंक को देखते हुए ''अभी शहर व शहर संलग्न देहात इलाके में तो जरूर, ऐसा कि दूर-दराज देहाती क्षेत्र में भी सशस्त्र संघर्ष चलाया जाना उचित नहीं है'' – एम.सी.सी. के अंदर उक्त गलत लाइन के विरूद्ध एक तीव्र दो-लाइन का संघर्ष तथा चौबीस परगना, काँकसा व हुगली के संघर्ष का मैदान छोड़ कर भाग खड़े हुए इने-गिने कुछ नेतृत्वकारी कामरेडों द्वारा उठाए गए यह सवाल कि ''एम.सी.सी. 'वाम' लाइन प्रयोग कर रही है'', के खिलाफ दो-लाइन का संघर्ष; (f) 1971-72 में असम-त्रिपुरा के एक नेतृत्वकारी कामरेड द्वारा उठाया गया ''मौजूदा स्थिति में दूसरे रूपों का कोई संगठन बनाने के बजाए वर्ग दुश्मन व राष्ट्रशक्ति के उपर लगातार स्कवायड हमला चलाकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं''– इस सवाल को लेकर दो-लाइन की बहस; 1977-78 में बादल द्वारा उठाया गया यह सवाल कि ''दक्षिणदेश(या लाल पताका) विशेष अंक -एक नम्बर की लाइन 'वाम' लाइन है'' – के खिलाफ कई वर्षों तक चलाया गया विभिन्न रूपों के दो-लाइन का संघर्ष; आदि-आदि। दो-लाइन का संघर्ष 1982 में का. के.सी. के निधन के बाद से 1994-95 तक चला। बाद में 1999 से 2001 तक तीखा दो लाइन का संघर्ष चला [आगे इसकी चर्चा की जायेगी]। ऐसे हर वितर्क और

दो-लाइन के संघर्ष के दौरान हमारी लाइन व व्यवहार और मजबूत हुई है।

1999 से 2001 तक चला तीखा दो-लाइन का संघर्ष ही एम.सी.सी.आई. को झकझोर दिया और हर मामले में हमें एक गुणात्मक छलांग लगाने में मदद किया

हमारे संगठन के अंदर बहुत पहले से ही माओ त्सेतुङ विचारधारा और माओवाद समानार्थक है – ऐसे एक आम समझदारी चली आ रही थी। फिर, कई बार माओवाद-शब्द का इस्तेमाल के लिए भी जोरदार आवाज उठी थी। 1986-87 में इसे लेकर कोलकता शहर कमिटी के अंदर कुछ तर्क भी हुआ था। हालांकि उस समय इस वितर्क का निचोड़ नहीं निकाला जा सका था। कारण, उस समय इस विषय को लेकर दो-लाइन का संघर्ष चलाने लायक स्थिति परिपक्व नहीं हुई थी।

पर, यह बात समझ में आ गई थी कि हमारे संगठन के सी.सी. स्तर पर ही तत्कालीन सी.सी.एम. बादल का दृढ़ मत यह था कि 'माओ विचारधारा व माओवाद समानार्थक है और माओवाद शब्द का इस्तेमाल ज्यादा सटीक है'– ऐसा मानना राजनीतिक रूप से गलत है। हालांकि, सतह पर यह वितर्क आने में और कुछ वर्ष लग गया और अंततः 1996-97 में यह वितर्क सामने आया। कारण यह कि 1996 में दूसरा केन्द्रीय सम्मेलन के बाद ही हमारी सी.सी. के अंदर एक को छोड़कर बाकी करीब सभी कामरेडों का यह दृढ़ अभिमत था कि माओ विचारधारा के बदले माओवाद-शब्द का इस्तेमाल ज्यादा सटीक, वैज्ञानिक व उपयुक्त होगा।

फिर, 1999 में एम.सी.सी. के संस्थापकों की तस्वीर सजाने का क्रमबद्ध रूप क्या होगा – का. के.सी., का. अमूल्य सेन व का. चन्द्रशेखर दास – इस रूप का होगा अथवा का. अमूल्य सेन, का. के.सी. व का. चन्द्रशेखर दास – इस रूप का होगा, इस सवाल को लेकर सी.सी. के अंदर ही एक तीखी बहस शुरू हुई।

सी.सी. में यह तय हुआ कि 1999 की अगस्त सी.सी. बैठक के दौरान नेतृत्व के फोटो सजाने के सवाल का हल निकाला जाएगा और 2000 की जनवरी बैठक में 'माओवाद' शब्द का इस्तेमाल के सवाल का हल ढूंढ़ा जाएगा।

यद्यपि कि 1999 की अगस्त बैठक में लम्बी बहस व वितर्क के दौरान सर्वसम्मति से और सभी सी.सी.एम. के हस्ताक्षरित एक निर्णय लिया गया और वह यह है कि फोटो सजाने का क्रम निम्न रूप होगा यानी का.के.सी., का.अमूल्य सेन व का. चन्द्रशेखर दास –

इस रूप से सजाया जाएगा।

पर, इस सी.सी. बैठक से लौटने के बाद ही बादल व भरत ने इस निर्णय के खिलाफ षड़यंत्रात्मक तरीके से पार्टी के भीतर गुटबंदी का रास्ता अपना लिया और पार्टी सदस्य व कैडरों के बीच भ्रम फैलाने में लग गया।

फिर, 2000 की जनवरी माह में आयोजित सी.सी. बैठक के दौरान कीब 7 रोज चर्चा, बहस व वितर्क के दौरान सर्वसम्मति से माओ-विचारधारा के बदले माओवाद शब्द का इस्तेमाल करना हर प्रकार से उचित व सही होगा – ऐसा निर्णय लिया गया।

परन्तु, इस बैठक से लौटने के बाद ही बादल और भरत माओवाद संबंधी सी.सी. निर्णय के खिलाफ गैर-सांगठनिक कायदे से और षड़यंत्रात्मक ढंग से गलत प्रचार व गुटबंदी करने में उतर पड़े। अब, 'माओवाद' लेकर वितर्क ही मुख्य स्थान पर आ गया। साथ-साथ, और कुछ प्वाइंट भी उनलोगों ने जोड़ दिया, जैसे- (क) का. स्तालिन के बारे में महान बहस के मूल्यांकन को नहीं; बल्कि नए सिरे से मूल्यांकन होना चाहिए, (ख) रिम से कोई संबंध नहीं रखना चाहिए, (ग) पी.डब्लु. के साथ एकतरफा युद्ध विराम की घोषणा गलत है, आदि-आदि।

इन सभी सवालों पर एक पार्टी के अंदर दो-लाइन का वितर्क संचालन कर जिस रूप से आखिरकार प्लेनम या सम्मेलन के जरिए इसका फैसला निकलना चाहिए था, बादल और भरत का गलत रवैया के कारण वैसा कर पाना संभव नहीं हुआ। पर, पूरे संगठन के अंदर इन सवालों पर तीव्र बहस हुई और अंतत: बादल, भरत व पं.बंगाल के इने-गिने दो-चार सदस्यों को छोड़कर 98 प्रतिशत सदस्य सी.सी. की लाइन को दिलोजान से समर्थन किए और माओवाद शब्द का इस्तेमाल संबंधी निर्णय का गरमजोशी के साथ समर्थन मिला।

पहले ही कहा जा चुका है कि इस दो-लाइन के संघर्ष के अंदर से गुजरते हुए हमारे अुंदर हर मामले में एक गुणात्मक बदलाव आया। इस दो-लाइन का संघर्ष हमें ऐसा झकझोर दिया कि हमारे अंदर की कमियों और गंदगी को निकाल फेंकने के लिए प्रेरित किया। एम. सी.सी. और पी.डब्लु. के बीच के आपसी संघर्ष संबंधी काला अध्याय से संबंधित हमारी भारी कमियों को समझने में और इसके लिए खुली आत्मालोचना करने को प्रेरित किया, हमारे अंदर के कठमुल्लावादी व संकीर्णतावादी रूझानों को उतार फेंकने में मदद किया। साथ-साथ केन्द्रीय स्तर से लेकर स्पेशल एरिया व उसके अंतर्गत दो रीजिओनल और राज्य स्तर पर सामरिक कमिशन गठन करने की और जनता की फौज के बतौर जनता की सशस्त्र फौजी शक्ति को अभी की स्थिति के अनुरूप जन मुक्ति गुरिल्ला सेना (या पी.एल.जी.ए.) के बतौर

गठन करने की जरूरत को समझाया और फौज व आधार-क्षेत्र निर्माण के काम में तेजी लाया। अंत तक आर.सी.सी.आई.(एम), आर.सी.सी.(एम), सी.पी.आई.(एम-एल)[द्वितीय सी. सी.], आर.सी.सी.आई. (एम-एल-एम) आदि सच्चे माओवादी क्रांतिकारियों के साथ और खासकर सी.पी.आई.(एम-एल)[पी.डब्लु.] के साथ एकताबद्ध होकर एक ऑल इंडिया पार्टी निर्माण करने की ओर आगे बढ़ाने में मदद किया।

अन्य अनेक स्थानों में लड़ाई का विस्तार तथा फौज व आधार इलाके का निर्माण के काम में तेजी आना

कांकसा और हजारीबाग की लड़ाई से सबक लेने के बाद तत्कालीन हजारीबाग-धनबाद जिले में और गया-औरंगाबाद जिले में जब संघर्ष का विकास हुआ तब यह बहुत जल्द निवर्तमान झारखण्ड रीजियॉन के अन्तर्गत रांची-सिंहभूम और उड़ीसा के कई जिलों में तथा देवघर, दुमका और जमुई, मुंगेर, बांका, भागलपुर जो बिहार में पड़ता है आदि इलाकों में बहुत तीव्र गति से संघर्ष का विकास हुआ और गुरिल्ला जोन के स्तर पर पहुंच गया। उधर निवर्तमान बिहार रीजियॉन के अन्तर्गत भी गया-औरंगाबाद का संघर्ष बहुत जल्द विकास व विस्तार होते हुए फिलहाल झारखण्ड के चतरा, पलामू, लातेहार, गुमला, लोहरदगा, गढ़वा जिले और छत्तीसगढ़ के सरगुजा, जशपुर, कोरिया, कोरवा जिले और दक्षिण बिहार के रोहतास, भोजपुर, भभुवा जिला होते हुए उत्तर प्रदेश के सोनभद्र, चंदौली और मिर्जापुर जिला तक तथा उत्तर बिहार के दरभंगा, मुजफ्फरपुर, वैशाली, मधुबनी, खगड़िया, सीतामढ़ी, शिवहर, पश्चिमी-पूर्वी चम्पारण, कटिहार, पूर्णिया आदि जिले में भी बहुत जल्द संगठन का विस्तार होने के साथ ही साथ संघर्ष का भी विकास हुआ और इस क्षेत्र का संघर्ष भी गुरिल्ला जोन के स्तर पर पहुंच गया। उत्तर बिहार के संघर्ष का प्रभाव बहुत जल्द उत्तर प्रदेश के उत्तरी हिस्से में फैलते हुए उत्तरांचल के उत्तराखण्ड इलाके में भी संगठन का विस्तार होने के साथ-साथ संघर्ष का निर्माण हुआ और उसमें तेजी आई।

इस तरह बिहार-झारखण्ड-बंगाल स्पेशल एरिया के अन्तर्गत संघर्ष के विकास और विस्तार होने के साथ-साथ स्वाभाविक रूप से फौज के निर्माण के काम में भी बहुत जल्द तेजी आई। संघर्ष के गुरिल्ला जोन में विकास होने के साथ-साथ फौजी फारमेशनों का विकास और विस्तार भी तेज गति से हुआ। आत्मरक्षा दल व जन मिलिशिया स्कवाड से शुरू कर स्थानीय नियमित छापामार स्कवाड का गठन करते हुए उसे राजनीति व सैन्य शिक्षा से शिक्षित-प्रशिक्षित तथा संघर्ष में परीक्षित-निरीक्षित स्कवाड सदस्यों को लेकर प्लाटून एवं कंपनी फारमेशनों तक का गठन किया गया। इन तमाम फौजी शक्तियों को सुव्यवस्थित करते

हुए वर्ष 2003 के 22 अप्रैल को पी.एल.जी.ए. का गठन किया गया तथा उसकी घोषणा की गई। उसी तरह क्रांतिकारी संघर्ष का मूल्यांकन करते हुए वर्ष 2003 के फरवारी में एस. ए.सी. की बैठक में पूरे बिहार-झारखण्ड-बंगाल स्पेशल एरिया के अन्तर्गत संघर्षशील इलाके के 80-85 प्रतिशत हिस्से को गुरिल्ला जोन के इलाके के रूप में चिन्हित किया गया तथा पूरे स्पेशल एरिया के अन्तर्गत 8 छापामार आधार क्षेत्रों का चुनाव किया गया। इन्हें आधार क्षेत्र में विकास करने के लिए एक निश्चत योजना के तहत निश्चित समय सीमा के अन्दर निर्धारित लक्ष्य को हासिल करने के दृष्टिकोण से संघर्ष जारी रखा गया है और एक के बाद एक कई महत्वपूर्ण सफलताएं हासिल करते हुए संघर्ष क्रमशः आगे बढ़ते जा रहा है। अब, जरूरत है लम्बी छलांग लगाये जाने की।

एम.सी.सी.आई. के नाम से अलग इतिहास का अंत और सी.पी.आई.(माओवादी) के इतिहास की शुरूआत

कामरेडो,

2004 के 21 सितम्बर, एम.सी.सी.आई. और सी.पी.आई.(एम-एल)[पी.डब्लु.] के विलय से नयी व एकताबद्ध पार्टी के रूप में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के गठन होने का अर्थ ही है एम.सी.सी.आई. का अलग इतिहास का भी अंत होना। का. के. सी. ने कहा था कि सी.पी.आई.(एम-एल) के सच्चे क्रान्तिकारी और एम.सी.सी.आई. के सच्चे क्रान्तिकारी एकदिन अवश्य-ही एक होगा। उनके स्वप्न आज साकार हुआ। अब हम सबों का परिचय सी.पी.आई.(माओवादी) के रूप में है। आवें, सी.पी.आई.(माओवादी) के झंडे तले आगे बढ़ते हुए अगले तमाम कार्यभारों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करें।

सीपीआई(एमएल)[पीडब्ल्यू] और एमसीसीआई के विलय से भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का गठन

भारत की नयी जनवादी क्रान्ति का ऐतिहासिक अग्रगामी कदम

21 सितम्बर 2004 भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में यादगार दिन रहेगा। इस दिन देश की दो प्रमुख माओवादी संरचनाओं के विलय से हिरावल सर्वहारा पार्टी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का गठन हुआ। इस विलय से देश की कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी शक्तियों का बड़ा हिस्सा एक पार्टी के तहत आ गया। शेष कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी शक्तियों तथा व्यक्तियों को इस केन्द्रीय संरचना के अन्तर्गत लाने के प्रयास अभी चल रहे हैं। हम सभी जानते हैं कि क्रान्तिकारी पार्टी के बिना कोई क्रान्ति नहीं हो सकती। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद और क्रान्तिकारी रणनीति एवं कार्यनीति पर आधारित बोल्शेविकीकृत पार्टी के बिना क्रान्ति कभी सफल नहीं हो सकती। इसीलिए इस पार्टी के गठन से भारतीय क्रान्ति की एक बुनियादी जरूरत की सेवा हुई है। सौभाविक ही है कि देश भर में उत्पीड़ित जनता और प्रगतिशील समूहों तथा व्यक्तियों ने इस नयी पार्टी के गठन का उत्साह से स्वागत किया है। जबकि दुश्मन और शासक वर्गों में घबराहट है। विभिन्न रंग-रूप के संशोधनवादी भी परेशान हैं कि वे अपनी प्रासांगिकता खो देंगे। वे एकीकृत माओवादी पार्टी के गठन के प्रति तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहे हैं।

आइए इस महान एकता के प्रति विभिन्न पार्टियों की प्रतिक्रिया का विश्लेषण करें।

एकता का आधार

यह ऐतिहासिक एकता आम तौर पर कम्युनिस्टों के सामने खड़ी सभी विचारधारात्मक तथा राजनीतिक सवालों और खास तौर पर भारतीय क्रान्ति के विशेष सन्दर्भ में विस्तृत चर्चा के बाद ही हासिल हो पायी है। फरवरी 2003 से सितम्बर 2004 तक, यानी डेढ़ साल से ज्यादा समय तक इन मुद्दों पर रेशा-रेशा चर्चा हुई। तब कहीं दोनों पार्टियों का विलय हो पाया है।

पहले एकता के विचारधारात्मक आधार पर चर्चा हुई। इसके तहत मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के समझदारी के सवाल पर विस्तृत चर्चा हुई। एकता के लिए

विचारधारात्मक आधार पर एक मत हो जाने पर अन्य सवालों पर रेशा-रेशा चर्चा हुई। इस क्रम में कार्यक्रम, संविधान, दुनिया तथा देश की परिस्थिति का विश्लेषण करने वाला राजनीतिक प्रस्ताव और भारत की नयी जनवादी क्रान्ति की रणनीति तथा कार्यनीति पर चर्चा हुई। इसके अलावा दोनों पक्षों ने पिछले तीन दशकों से अपने व्यवहार की विस्तृत आत्मालोचनात्मक समीक्षा का काम किया। बिहार-झारखण्ड क्षेत्र में हुई झड़पों के काले अध्याय पर गहरी तथा सांगोपांग आत्मालोचना की गयी। कई-कई मुद्दों पर तीखे संघर्षों और सभी प्रमुख मुद्दों पर अन्ततः सहमति हासिल करने के बाद ही दोनों संगठनों की एकता की प्रक्रिया पर चर्चा हुई। तभी कहीं सारे सांगठनिक मसलों को तय किया गया और दोनों पार्टियों के विलय से भाकपा (माओवादी) गठित हुई।

एकता की इस सफल प्रक्रिया ने एक सकारात्मक अनुभव प्रस्तुत किया है। अब देखा जाय कि इस प्रक्रिया का सार क्या है।

पहली बात यह कि विचारधारात्मक एवं राजनीतिक प्रश्नों को महत्व न देने वाले, भारत के मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन में एकीकरण की अन्य मिसालों से अलग यह प्रक्रिया एकीकरण से पहले ही चर्चाओं के सघन दौर से गुजरी।

दूसरी बात यह कि यह एकता अतीत के व्यवहार की रेशा-रेशा समीक्षा पर आधारित है। भारतीय सन्दर्भ में यह एकीकरण के लिए इसलिए एक अनिवार्य पूर्वशर्त रही है क्योंकि एकीकृत दस्तावेजों की (मौजूदा) लाइन के आधार पर देखा जाय, तो अतीत के व्यवहार में निश्चित रूप से कुछ खामियाँ रही होंगी। जब तक इनका विश्लेषण न किया जाय तब तक पुराने को नये में बदलते हुए सतही होने की सम्भावना रहेगी। अतीत में जो गलत रहा है उसका निषेध करना नये को अपनाने से पहले जरूरी है। यह मान लेना सही नहीं होगा कि अतीत में जो कुछ भी किया गया, सब सही ही था और नयी राजनीतिक लाइन भी सही ही है। यह खास तौर पर उन ईमानदार व्यक्तियों तथा समूहों के लिए लागू होता है जिनका अतीत में दक्षिणपन्थी भटकाव रहा होगा परन्तु अब नये केन्द्र के इर्द-गिर्द एकताबद्ध होना चाहते हैं।

तीसरी बात यह कि इस एकता के दौरान दोनों प्रतिनिधिमण्डलों की ओर से भरपूर परिपक्वता का परिचय दिया गया है जहाँ वे उसूल के मामलों पर दृढ़ता कायम रखते हुए छोटे-छोटे मुद्दों पर बड़ा लचीलापन दिखा पाये। मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन, खास तौर पर भारत में, विचारधारात्मक शुद्धता के नाम पर मतभेदों को बहुत बड़ा बना देने की निम्न पूँजीवादी मानसिकता से ग्रस्त रहा है। इससे भी बुरी बात यह कि ज्यादातर मतभेद कभी व्यावहारिक आन्दोलन से जुड़े नहीं रहे हैं। जिस सिद्धान्त पर बहस होती रही है उसका

क्रान्तिकारी व्यवहार से बहुत कम सम्बन्ध रहा है। इसके कारण लगातार फूट होती रही है जिससे दशकों तक आन्दोलन को नुकसान पहुँचा है। इस दृष्टिकोण के साथ ही वह निम्न पूँजीवादी व्यक्तिवाद और छोटे दायरे की मानसिकता भी रही है जो एक बड़े समूह के बीच जनवादी केन्द्रीयता का पालन करने की तैयारी की कमी को दर्शाती है। किसी भी पार्टी में मतभेद और तीखे मतभेद भी हो सकते हैं। इनका समाधान दो दिशाओं के संघर्ष तथा जनवादी केन्द्रीयता के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि फूट करने से। एकता की प्रक्रिया में कुंजीभूत मुद्दों को हल कर लेने और बाकी मुद्दों को एक ही पार्टी के भीतर उपरोक्त प्रक्रिया से सुलझाने के लिए छोड़ देने से ही यह सबसे अच्छे तरीके से हल हो सकेगा। पूर्ववर्ती पी. डब्ल्यू. और एम.सी.सी.आई. दोनों पार्टियों का ऐसे ही सघन अन्तर-पार्टी संघर्षों का समृद्ध इतिहास रहा है। इससे वे दोनों मजबूत हो उठी हैं।

एक गलत धारणा यह रही है कि राजनीतिक तथा विचारधारात्मक सवालों पर कोई भी एकता अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर जुड़ी होनी चाहिए। एक अर्थ में यह सही है क्योंकि विचारधारात्मक सवाल सार्वभौमिक होते हैं, इसलिए दुनिया की माओवादी पार्टियों का इनके प्रति एक समान नजरीया होना चाहिए। भारत के माओवादी पार्टियों के प्रति एक नजरीया होना और विदेशों में माओवादियों के प्रति दूसरा रखना राजनीतिक तौर पर गलत होगा। लेकिन विदेशों के माओवादियों के प्रति नजरीये को मौजूदा संरचनाओं में से किसी एक के साथ जुड़ने के सांगठनिक सवाल के साथ मिला देना विचारधारात्मक सवाल का विद्रूपीकरण होगा। इससे बुरी बात यह है कि (अन्तरराष्ट्रीय स्तर के) इस सांगठनिक सवाल को भारत की क्रान्तिकारी पार्टियों की एकता के लिए शर्त बनाना, विभाजन पैदा कर सकता है। इससे सांगठनिक सवाल को विचारधारात्मक सवालों के साथ गड्डमड होता है। यहाँ विचारधारात्मक सवाल यह है कि क्या नयी पार्टी दुनिया में जो भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की हिफाजत करता हो उसके साथ एकीकरण का समर्थन करती है या संशोधनवादियों या कागजी संगठनों के साथ एकीकरण का समर्थन करती है? इस विचारधारात्मक सवाल पर नयी पार्टी की समझ स्पष्ट है।

एक प्रवृत्ति विचारधारात्मक/राजनीतिक बहस को क्रान्तिकारी व्यवहार के साथ न जोड़ने की भी है। इससे अन्तहीन फूट की ओर जाने की और सिद्धान्त के नाम पर व्यवहार से जुदा कागजी संगठनों के साथ भी एकता चाहने की प्रवृत्ति उपजती है। क्रान्तिकारी व्यवहार से सम्बन्ध न रखते हुए सैद्धान्तिक चर्चाओं में लगना अन्तहीन बहस और लगातार विभाजन की ओर पहुँच सकता है, जैसा कि हमने भारत में इससे पहले देखा है और दुनिया के कुछ अन्य देशों में भी देख रहे हैं। व्यवहार और केवल व्यवहार ही समस्त सैद्धान्तिक चर्चाओं की

परीक्षा है। भारत में अक्सर जो लोग सबसे ज्यादा उग्र तरीके से बोलते रहे हैं उन्होंने न तो केवल जन युद्ध शुरू करने की कभी कोशिश ही (या इसके लिए ठोस तैयारी) की है, बल्कि जब भी यह शुरू हुआ तो खुद को इससे दूर भी रख दिया है। उनका खोखलापन वर्ग संघर्ष/सशस्त्र संघर्ष के आगे बढ़ने के साथ-साथ बेनकाब हो जाता रहा है। जो वर्ग संघर्ष/सशस्त्र संघर्ष में गहराई तक लगे होते हैं उनका सुधार (यदि गलतियाँ की गयी हों तो) हो सकता है, जबकि जो नहीं लगे होते वे बाल की खाल निकालने वाले तर्क-वितर्क में ही लगे रहते हैं जिससे अन्तहीन फूट और विभाजन पैदा होता है।

अन्त में यह बात कि मौजूदा एकता ने मार्क्सवाद (आज के सन्दर्भ में माओवाद) और संशोधनवाद के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींचने में मदद की है। न केवल विचारधारा और राजनीति के स्तर पर, बल्कि सांगठनिक और सैनिक स्तर पर भी है। आज हर सच्चे क्रान्तिकारी को तय करना होगा कि वह क्रान्तिकारी माओवादी धारा के साथ जुड़ना चाहता है या किनारे पर बैठे रहना चाहता है या फिर संशोधनवादी खेमे की ओर जाना चाहता है। इस नयी पार्टी के गठन के साथ ही मार्क्सवाद और संशोधनवाद के बीच, क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति के बीच यह विभाजन रेखा जो अब तक कुछ-कुछ धुंधली थी, बिल्कुल स्पष्ट हुई है।

पाँच दस्तावेजों को अन्तिम रूप दिये जाने के साथ ही इस एकता का आधार स्पष्टतः विचारधारात्मक एवं राजनीतिक हो जाता है। इससे इस पार्टी या किसी अन्य पार्टी के भीतर गलत प्रवृत्तियों और रुझानों को सिर उठाने से बचाया नहीं जा सकता। यह सही है कि किसी पार्टी की राजनीतिक लाइन उसके क्रान्तिकारी मार्ग पर बने रहने या न रहने का फैसला करने वाला कारक है। लेकिन इतिहास ने यह साबित किया है कि अच्छी-से-अच्छी पार्टी भी भटकाव की ओर चली जा सकती है और संशोधनवादी भी बन सकती है। सही मार्ग पर बने रहने का एकमात्र तरीका मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की रोशनी में अपने व्यवहार की लगातार समीक्षा करते जाना, जनवादी केन्द्रीयता के भीतर गलत प्रवृत्तियों के खिलाफ लगातार लड़ाई लड़ना और आलोचना तथा आत्मालोचना की पद्धति को लगातार अपनाना ही है।

जनता और क्रान्तिकारी खेमे का रुख

क्रान्तिकारी कतारें भारतीय जनता की धरती पर एकता के इस ऐतिहासिक कदम से खास तौर पर अनुप्राणित हो उठी हैं। अब किसानों, मजदूरों, कर्मचारियों, छात्रों, महिलाओं, दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं आदि के पास एक ही, नयी-नयी

एकीकृत हुई पार्टी है जो शोषण और उत्पीड़न से मुक्ति हासिल करने में उनका नेतृत्व कर सकती है। क्रान्तिकारी कतारों ने भारतीय क्रान्ति के शहीदों एवं नेताओं के लम्बे समय से संजोये हुए सपनों को हकीकत बनते हुए देखा है। भारत के कई अन्य ईमानदार क्रान्तिकारी ग्रूपों ने भी इस विलय का स्वागत किया है और मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद तथा क्रान्तिकारी रणनीति एवं कार्यनीति के आधार पर देश के इस मुख्य क्रान्तिकारी रुझान के साथ एकजुट होने की चाहत प्रकट की है।

उस दिन की कामना सभी लोग करते रहे हैं जब देश के सच्चे माओवादी क्रान्तिकारियों के बीच सालों तक चले झगड़ों और विभाजनों का अन्त हो जायेगा। सभी की तहेदिल से ये चाहत रही है कि देश को सच्ची आजादी की ओर और समूची उत्पीड़ित जनता की मुक्ति की ओर नेतृत्व देने के लिए एक सच्ची सर्वहारा पार्टी हो। देश की दो प्रमुख क्रान्तिकारी धाराओं ने जनता और प्रगतिशील शक्तियों के उस हिस्से के मन में फिर से एक बड़ी आशा जगायी है, जो सोवियत संघ तथा चीन में हुए विपर्यय के साथ ही साम्यवाद की भी सामयिक पराजय से निराश हो चुका था। सभी को यह विश्वास है कि नयी सर्वहारा पार्टी अतीत की क्रान्तियों के सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही अनुभवों से सीखेगी और उन गलतियों को नहीं दोहरायेगी जो संशाधनवादी अध:पतन और पूँजीवादी पुनर्स्थापना की ओर ले गयी थीं। सभी को भारतीय क्रान्ति के अभी से रक्तरंजित हो चुके मार्ग से होते हुए एक नयी शुरुआत की आशा है। पूर्ववर्ती पीडब्ल्यू और एमसीसीआई ने जो बीज बोये थे, निश्चित ही आजादी और मुक्ति की ओर इस लम्बे मार्च में उसकी फसल तैयार होकर रहेगी।

इस एकता का स्वागत केवल देश की जनता ने ही नहीं किया है, बल्कि विदेशों में भी, खास तौर पर दुनिया की साम्राज्यवाद–विरोधी तथा क्रान्तिकारी शक्तियों और विदेशों में रह रहे, भारत के तमाम अप्रवासी मजदूर वर्ग ने भी किया है। नेपाल तथा बांग्लादेश की माओवादी पार्टियों और दक्षिण एशिया की माओवादी पार्टियों की तालमेल कमेटी (कम्पोसा) ने भी इस ऐतिहासिक एकीकरण का गरमजोशी से स्वागत किया है। देश भर की असंख्य कम्युनिस्ट पार्टियों ने भी ऐसा ही किया है। एकता का स्वागत करने वालों में प्रमुख हैं फिलिपीन्स की कम्युनिस्ट पार्टी, तुर्की की कम्युनिस्ट पार्टी/मार्क्सवादी–लेनिनवादी, नार्वे की मजदूर पार्टी (एकेपी), बेल्जियम की मजदूर पार्टी, को–रिम और न्यूजीलैण्ड का पूँजीवाद–विरोधी गठबन्धन। अमरीका, कनाडा तथा इंगलैण्ड के भारतीय मजदूर संगठनों ने भी इस विलय का क्रान्तिकारी अभिवादन किया है। एक अरब से ज्यादा आबादी वाले, विशाल भारत में क्रान्ति केवल भारत तथा दक्षिण एशिया की तमाम जनता के लिए ही नहीं, बल्कि समूची दुनिया

की जनता के लिए भी एक आशा का स्रोत है। इसलिए कि अपनी इसी विशालता के कारण जब भारत को साम्राज्यवाद की जंजीरों से मुक्त किया जायेगा, तो इसका जनता की शक्तियों की अन्तरराष्ट्रीय लामबन्दी पर काफी गहरा असर पड़ेगा और इससे दुनिया भर में साम्राज्यवाद के खिलाफ पलड़ा भारी पड़ेगा।

दुश्मन के बलों की प्रतिक्रिया

इस एकीकरण के प्रति दुश्मन के बलों का रुख इस बात का सूचक है कि वे इस नयी पार्टी को यथास्थिति के लिए एक खतरे के रूप में देख रहे हैं। भारतीय शासक वर्ग माओवादियों के खिलाफ इतिहास में पहले कभी इतने एकजुट होकर मोर्चा नहीं लिये थे। नयी पार्टी के गठन की सार्वजनिक घोषणा हो जाने के तत्काल बाद केन्द्र तथा प्रदेश की सरकारों ने आन्तरिक सुरक्षा की अपनी कार्यसूची पर सबसे ऊपर ''नक्सलवाद की समस्या'' को ही रखा है। पहले केवल भाजपा/आर.एस.एस. सरीखे लोग ही नक्सलवादियों से ज्यादा बौखला उठते थे। अब वे ही नहीं, बल्कि एकाएक प्रधानमन्त्री, राष्ट्रपति, गृहमन्त्री, रक्षामन्त्री और मुख्यमन्त्री से लेकर सेना, पुलिस के मुखिया आदि तक सारे के सारे नक्सलवादियों के बढ़ते प्रभाव को दबाने के लिए दीर्घकालिक नीति बनाने में लगे हुए हैं। इस एकता से पहले उनकी ऐसी हाबड़तोड़ कभी देखी नहीं गयी थी। भाजपा के राज में भी नहीं।

जब से विलय की घोषणा हुई तभी से भारतीय सत्ता के मुख्य स्तम्भों ने तथाकथित वाम चरमपन्थ के खिलाफ ताबड़तोड़ हमला चला रखा है। आये दिन वे कहते रहे हैं कि अब भारतीय राज के सामने सबसे बड़ा खतरा यही है। रक्षामन्त्री प्रणव मुखर्जी ने बार-बार कहा है कि वामपन्थी चरमपन्थ आन्तरिक सुरक्षा के लिए उतना ही बड़ा खतरा है जितना कि संकीर्णतावादी तथा साम्प्रदायिक हिंसा। राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकर एम.के. नारायणन लगातार यह हायतौबा मचाते रहे हैं कि ''वामपन्थी चरमपन्थ भारतीय राज के सामने सबसे बड़ा खतरा है।''

5 फरवरी 2005 को गृहमन्त्री ने अपने बयान में कहा कि ''नक्सलवाद-प्रभावित प्रदेशों में जम्मू-कश्मीर और असम की तर्ज पर प्रदेश के मुख्यमन्त्री के नेतृत्व में सीआरपीएफ और प्रदेश की पुलिस के वरिष्ठ अफसरों को लेकर'' एकीकृत कमान कायम करना प्रस्तावित है। इसका अर्थ होगा नागरिक शासन समाप्त कर इन प्रदेशों को अर्द्धसैनिकों के हवाले कर देना। इस कड़वी दवा के लिए चुने गये प्रदेश उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, झारखण्ड, आन्ध्र प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल हैं। यह सभी प्रदेशों के लिए

बन रहे विशेष कार्य बलों (एसटीएफ) और इसी मकसद से खास तौर पर खड़ी की जा रही इण्डिया रिजर्व बटालियनों (आईआरबी) के अलावा होगा। कर्नाटक में वीरप्पन के खिलाफ इस्तेमाल हुए एसटीएफ को अब माओवादियों के खिलाफ लगाया गया है। आईआरबी स्थानीय लोगों को मारने के लिए स्थानीय लोगों का ही इस्तेमाल करते हुए नक्सलवादी आन्दोलन के इलाकों से स्थानीय मूल निवासियों को ही भर्ती कर रही है। मध्य अप्रैल में मुख्यमन्त्रियों की विशेष बैठक हुई जिसमें गृहमन्त्री, प्रधानमन्त्री, रक्षा मंन्त्री भी उपस्थित रहे। इसमें नक्सलवादियों का मुकाबला करने के लिए विशेष दीर्घकालिक रणनीति तैयार की गयी। अमरीकी सरकार ने भी चेतावनी दी है कि ''यदि वामपन्थी चरमपन्थ के खिलाफ कदम न उठाये जायें, तो भारत में अमरीकी निवेश प्रभावित हो सकता है।'' इसने भाकपा (माओवादी) को आतंकवादी सूची में रख दिया और अन्ततः सितम्बर 2005 में नक्सल-प्रभावित प्रदेशों के मुख्यमन्त्रियों की स्थाई कमेटी गठित की गयी जिसमें हमारी पार्टी के नेतृत्व में चल रहे नक्सलवादी आन्दोलन से प्रभावित 13 प्रदेशों को समेटते हुए संयुक्त कार्य बल (ज्वाइंट टास्क फोर्स) कायम करने का फैसला हुआ।

दुश्मन के खेमे की इस भागादौड़ी से यह स्पष्ट है कि माओवादियों की एकता भारतीय शासक वर्गों और उनके साम्राज्यवादी आकाओं के लिए एक गम्भीर खतरा उपस्थित कर रहा है।

संशोधनवादियों, एन.जी.ओ. आदि की गिरफ्त से बाहर निकलें

देश में सच्चे कम्युनिस्टों के एक ही सर्वहारा पार्टी में सुदृढ़ीकरण हो जाने के साथ ही माओवादी खेमे की शक्तियों का तेजी के साथ ध्रुवीकरण हो रहा है। कम्युनिस्टों को अब असली और नकली के बीच चुनना होगा, प्रगतिशील लोगों को भी अब चुनना होगा कि बदलाव की सच्ची ताकतों के साथ खड़े हों या फिर पाखण्डी तथा नकली ताकतों के साथ। रेखाएँ अब ज्यादा स्पष्ट होती चली जायेंगी। हर किसी को यह तय करना होगा कि वह बदलाव के पक्ष में होगा या उसके विरोध में।

भाकपा/माकपा जैसे शासक वर्गीय कम्युनिस्ट खुलकर साम्राज्यवादी कार्यसूची को आक्रामक तरीके से आगे बढ़ाने वाले केन्द्र सरकार के साथ हो लिये हैं। लम्बे समय से वे अपने द्वारा शासित प्रदेशों में साम्राज्यवादी कार्यसूची पर अमल करते रहे हैं। अब अपने खेमे को धोखा देने के लिए कभी-कभी दिखावटी 'विपक्ष' के रूप में प्रस्तुत होने के बावजूद वे केन्द्र में उसी तरह की नीति अपना रहे हैं। उनकी तथाकथित धर्मनिरपेक्षता और हिन्दुत्व का विरोध अपनी शासक वर्गीय सारवस्तु को छिपाने के लिए

एक झीना–सा पर्दा मात्र है। भाकपा/माकपा से जुड़े कार्यकर्ताओं तथा प्रगतिशील लोगों की भारी तादाद को, माकपा से रिश्ता बनाकर लुभावने पद हासिल करने या फायदा उठाने की जिनकी कैरियरवादी उम्मीदें नहीं होतीं, उनको इस प्रतिक्रियावादी तानेबाने से सम्बन्ध रखने के विषय में पुनर्विचार करने की जरूरत है। भाकपा/माकपा के नेताओं का जुबानी विरोध केवल अपने खेमे में मौजूद लोगों को धोखा देने, उनके असन्तोष को धुमिल करने और समाज के व्यापक प्रगतिशील हिस्सों को बदलाव की असली शक्तियों का पक्ष लेने से रोकने के लिए ही प्रकट होता है। सत्ताधारियों के इस शोषणकारी तथा उत्पीड़नकारी व्यवस्था को कायम रखने के मंसूबों में भाकपा/माकपा के नेता एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इन दो पार्टियों में माकपा खास तौर पर क्रान्तिकारियों के प्रति सबसे ज्यादा आक्रामक तथा दुश्मनाना रवैया अपनाती है, जो कि भाजपा और काँग्रेस से खास अलग नहीं है।

जो लोग सरकारी कम्युनिस्टों के जाल में फंसे नहीं हैं उनमें माले खेमे के वे लोग भी हैं जो जनता/प्रगतिशील लोगों को भटकाने का प्रयास करते पाये जाते हैं। इनमें अग्रिम पंक्ति में लिबरेशन का तानाबाना है जो भाकपा (माओवादी) के गठन को लेकर काफी चिल्ल–पौं मचा रहा है। वह न केवल अपने मुखपत्र में लेख लिखता रहा है, बल्कि पूँजीवादी मीडिया में भी लेखों को छपवाना जारी रखे हुए है। ये लोग झूठ को सच बनाते हैं, गलत–सलत बातें प्रचारित करते हैं और माओवादियों को 'आतंकवादी' के रूप में चित्रित करते हैं। वैसा ही जैसे पुलिस करती है। उनकी कलम या जुबान से अराजकतावादी या आतंकवादी शब्द इतनी आसानी से निकल आता है मानो वे किसी इस्लामी कट्टरतावादी के बारे में बात कर रहे हों। उन्हीं की कतार में एक नयी संशोधनवादी भाकपा (माले) भी शामिल हुई है जो कानू सान्याल के धड़े और रेड फ्लैग के विलय से गठित हुई है। जहाँ लिबरेशन दुनिया तथा देश के मुद्दों पर ज्यादातर भाकपा/माकपा की ही अवस्थितियों को अपनाता है, वहीं यह नयी–नवेली संरचना कुछ 'वामपन्थी' जुमलों को बनाये रखते हुए मुख्यत: अपना गुस्सा माओवादियों पर ही केन्द्रित करती है जो उसे अराजकतावादी और आतंकवादी दिखायी देते हैं। इसके अलावा मा–ले का तमगा लगाये कई अन्य समूह भी हैं जिन्होंने विलय और नयी पार्टी के गठन के प्रति नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है। इनमें ज्यादातर या तो पहले ही संशोधनवादी खेमे में पहुँच चुके हैं या वहाँ तक उनका पहुँचना तय है।

गम्भीर दक्षिणपन्थी भटकाव वाली कुछ ऐसी कम्युनिस्ट शक्तियाँ भी हैं जिन्होंने इसे एक सकारात्मक कदम के रूप में तो देखा है पर अभी दक्षिणपन्थी व्यवहार के अपने लम्बे

अतीत के कारण इससे जुड़ने में संकोच कर रहे हैं। उनके सामने केवल दो ही विकल्प हैं। या तो सच्ची क्रान्तिकारी धारा के साथ आ मिलें या कम से कम मोर्चा संगठनों में इस धारा के साथ सक्रिय रूप से आ जुड़ें। लम्बे समय से अपने अलग अस्तित्व के कारण इनमें से कई शक्तियाँ अपनी छोटे दायरे की मानसिकता के निम्न पूँजीवादी रोग से बुरी तरह ग्रसित भी हैं। मतभेद रखने के नाम पर अलग-थलग रहना असल में अर्थहीन है क्योंकि किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी में मतभेद हमेशा रहेंगे। इनको जनवादी केन्द्रितयता के दायरे में भीतर से ही उठाया व चर्चा में शामिल किया जाना चाहिए। ज्यादातर को अपने अतीत के दक्षिणपन्थी व्यवहार पर गम्भीरता से मन्थन करने और बदलने के लिए राजी होने की भी जरूरत है। या फिर कम से कम अगर वे क्रान्तिकारी धारा के साथ जुड़ना/शामिल होना चाहते हों, तो खुले मन से अपनी कमियों को स्वीकार करने की जरूरत है।

अन्ततः एक बड़ा प्रगतिशील खेमा भी है जिसे एनजीओ या उपरोक्त संशोधनवादी अपनी ओर लुभाते हैं। एनजीओ तथा संशोधनवादियों का एकमात्र मकसद यह है कि इस बड़ी प्रगतिशील शक्ति को मौजूदा ढांचे के भीतर रखा जाय और उनके तथा सच्चे क्रान्तिकारियों के बीच दिवार खड़ी की जायें। इस तरह वे जाने-अनजाने दुश्मन के हाथ में औजार बन जाते हैं। हर प्रगतिशील शक्ति को यह समझना होगा कि बदलाव केवल सच्चे क्रान्तिकारियों के साथ संयुक्त मोर्चा बनाते हुए ही सम्भव होगा। जिस तरह कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी अन्य प्रगतिशील शक्तियों के विचारों का भी, वे गैर-मार्क्सवादी हों तो भी, सम्मान करने के लिए तब तक तैयार रहते हैं जब तक वे कोई साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी रुख अपनाते हैं, उसी तरह उन्हें भी विचारधारात्मक मतभेद रखते हुए भी कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों का सम्मान करना चाहिए। किसी को भय या कैरियर की बलिवेदी पर अपनी ईमानदारी को नहीं चढ़ाना चाहिए। सकारात्मक बहस और संयुक्त कार्रवाई आगे बढ़ने का एकमात्र रास्ता है।

निष्कर्ष

भाकपा (माओवादी) का गठन देश की उत्पीड़ित जनता के लिए नयी आशा है। इस पतीत तथा भ्रष्ट व्यवस्था की सड़ी-गली राजनीतिक काया के समक्ष यह एक चमकता सितारा है। नवगठित भाकपा (माओवादी) ऐसा कोई दावा नहीं करती कि भारतीय क्रान्ति की विशाल संश्लिष्टतता के लिए उसके पास सारे जवाब हैं। लेकिन इसने एक क्रान्तिकारी मार्ग का खाका तैयार किया है। उसे यह विश्वास है कि इसी प्रक्रिया में वह इन समस्याओं का समाधान करना जारी रखते हुए समाजवाद तथा साम्यवाद की ओर पहले कदम के रूप में नयी जनवादी क्रान्ति

को सफलतापूर्वक अंजाम देगी। यह मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद की रोशनी में सभी समस्याओं का समाधान करने और अन्तरराष्ट्रीय अनुभवों से सीखने का प्रयास करेगी। यह मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धान्त को भारतीय क्रान्ति के व्यवहार पर लागू करते हुए जड़सूत्रवाद और अनुभववाद दोनों ही से बचेगी। फिर भी चलते–चलते त्रुटियों का होना और अनदेखी उलझनों में फंसना लाजिमी है; यह अवश्यम्भावी है। इसलिए सच्चे आत्मालोचनात्मक रवैये और विनम्रता के साथ वह अपनी गलतियों को स्वीकार करेगी, त्रुटियों का सुधार करेगी और क्रान्तिकारी राह पर अन्तिम विजय की ओर आगे बढ़ेगी।

यह पार्टी साम्यवाद के खातिर अपनी जान तक कुर्बान करने वाले, पूर्ववर्ती दोनों पार्टियों के हजारों कार्यकर्ताओं तथा नेताओं के विराट बलिदान के बीच से उभरी है।ये हमारे समाज के सर्वोत्कृष्ट इन्सान, सबसे आगे बढ़कर आत्मोत्सर्ग करने वाले इन्सान रहे हैं। यह नयी पार्टी निस्सन्देह अपनी इस गौरवशाली विरासत पर खरी उतरेगी। अनावश्यक कुर्बानियों से बचने का प्रयास करते हुए वह क्रूर दुश्मन का सामना करते हुए जिस साहस तथा फौलादी जिद्द की उम्मीद किसी कम्युनिस्ट से की जाती है, उसका परिचय देगी। इसी प्रक्रिया में भाकपा (माओवादी) वर्ग संघर्ष तथा सशस्त्र संघर्ष में खुद को तपाती जायेगी और इस्पात बनकर निखर उठेगी।

देश के कई इलाके छापामार जोन में विकसित हो चुके हैं। कई स्थानों पर भ्रूण अवस्था में सत्ता का उदय हो रहा है। जन मुक्ति छापामार सेना ताकत में और गहराई में बढ़ती जा रही है। यह नयी सत्ता नये जनवादी राज्य के बीज का रूप धारण कर रही है। फिर भी एक अरब से ज्यादा आबादी वाले देश के आकार की तुलना में हमारी पार्टी अभी बहुत छोटी ही है। अभी भी यह शैशव अवस्था में है। इसे अभी बहुत लम्बा सफर तय करना है। रास्ता अवश्य ही घुमावदार होगा। परन्तु लगातार अगर क्रान्तिकारी राह पर चला जाय, तो भविष्य उज्ज्वल होगा।

आज जहाँ तमाम संसदीय पार्टियों और अण्डरवर्ल्ड माफिया में कोई खास फर्क नहीं रह गया है। आत्मोत्सर्ग करने को तैयार, समर्पित कार्यकर्ताओं के दम पर खड़ी भाकपा (माओवादी) पार्टी देश को घेर रहे घटाटोप के बीच अपनी प्रचण्ड किरणें बिखेरनेवाले, उगते सूर्य के समान है। नयी जनवादी क्रान्ति के भोर की लालिमा अब फूटने को है। आइये, उदीयमान नये समाज के उजाले की ओर कदम मिलाते हुए आगे–आगे बढ़ते चलें।

सीपीआई(एमएल)[पीडब्ल्यू] का संक्षिप्त इतिहास

परिचय

हमारे देश में माओवादी आन्दोलन पिछले साढ़े तीन दशकों से अस्तित्व में रहा है। इस प्रक्रिया में **भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी)** घुमावदार रास्तों से होकर गुजरी, जिस दौरान शोषण-मुक्त समाज की रचना करने के महान लक्ष्य के खातिर हजारों लोग शहीद हुए हैं। इस दौरान पार्टी ने टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता तय किया है। बड़ी-बड़ी जीतें हासिल की हैं और गम्भीर सामयिक पराजय भी। यह पार्टी मौत तक को चुनौती देने वाली कुर्बानियों की भी गवाह रही है। फिर भी इस लम्बे अन्तराल में पार्टी ने सार्थक उपलब्धियाँ हासिल की हैं। 35 सालों से अधिक इस अन्तराल में पार्टी ने राज्य के नृशंस दमन का डटकर मुकाबला करते हुए लाखों की तादाद में जनता को अपने प्रभाव में लाया है। 1972 में गम्भीर सामयिक पराजय का सामना करने के बावजूद पार्टी पूरे आन्दोलन को भटकाने का प्रयास करने वाले दक्षिणपंथी तथा वामपंथी, प्रधानतः दक्षिणपंथी-अवसरवादी रुझानों से लोहा लेने के साथ-साथ पहले के दौर की वामपंथी भूलों को सुधारते हुए दोबारा खड़ी होकर आगे बढ़ने में कामयाब हो पायी है। इस पूरे दौर में पार्टी ने अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ चले विश्वव्यापी संघर्ष के हिस्से के रूप में हमारे देश में उस आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ लड़ाई लड़ने में बड़ी अहम् भूमिका अदा की है जो दुनिया के पैमाने पर साम्यवाद के सामने मुख्य विचारधारात्मक खतरा रहा है। पार्टी ने हमारे देश-समाज के सर्वोत्कृष्ट इन्सानों के खून से रंगे, आत्मोत्सर्ग तक के लिए तैयार और

सबसे ज्यादा समर्पित तमाम कामरेडों के खून से रंगे माओवाद के लाल झण्डे को भारत भूमि पर लहराये रखा है।

देश में क्रान्तिकारी आन्दोलन को आगे बढ़ाने के दौरान पार्टी ने जनता की हथियारबन्द छापामार शक्तियों का निर्माण किया है। भारतीय क्रान्ति के इतिहास में पहली बार व्यवस्थित रूप से जनता की फौज खड़ी की गयी जिसे आखिरकार 2 दिसम्बर को **पीजीए** के रूप में आकार दिया गया। आधार इलाके स्थापित करने के मकसद से पार्टी के नेतृत्व में जनता के हमारे सशस्त्र बल ने प्रतिक्रियावादी भारतीय राजकीय बलों के खिलाफ दीर्घकालिक, सुसंगत तथा दुर्द्धर्ष सशस्त्र संघर्ष लड़ते हुए और सशस्त्र कृषि क्रान्ति को आगे बढ़ाते हुए देश के इतिहास में गौरवशाली भूमिका अदा की है। दीर्घकालिक जन युद्ध की इसी प्रक्रिया में पार्टी सुदृढ़ होती चली गयी और फौज का उदय तथा विकास हुआ है।

इसी के साथ सीपीआई(एमएल)[पीडब्ल्यू] ने अपने क्रान्तिकारी आन्दोलन की उपलब्धियों का सुदृढ़ीकरण किया और इसका उन नये इलाकों तक विस्तार किया जहाँ के लोग कम्युनिस्ट पार्टी तक को शायद ही जानते थे। साथ ही, इसने पहली बार क्रान्तिकारी जन संगठन गठित किये तथा देश के अनेक हिस्सों में इन्हें मजबूत किया और इसके जरिये पार्टी का जनाधार अधिक गहरा किया।

एमसीसी का इतिहास भी इसी तरह का रहा है। अब भारतीय क्रान्ति की इन्हीं दो प्रमुख धाराओं का विलय हो जाने पर अब एक वेगवान नदी तैयार हुई है जिसकी प्रचण्ड लहरें सारे दुश्मनों को नष्ट कर डालेंगी और समाजवाद तथा साम्यवाद की लम्बी यात्रा के पहले मुकाम के तौर पर नयी जनवादी क्रान्ति को सम्पन्न कर सकेंगी। यह कार्य विराट और जिम्मेदारियाँ विशाल हैं। हमारे देश का आकार, जनसंख्या, संश्लिष्टता और दुनिया में इसका भू-राजनीतिक स्थान ऐसा है कि भारत की जनवादी क्रान्ति की सफलता साम्राज्यवाद की जंजीर को इतनी बुरी तरह कमजोर कर देगी कि शक्ति-सन्तुलन केवल एशिया में ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में बदला जा सकेगा।

यहाँ हम भाकपा(माले) के उदय के समय से उसका संक्षिप्त इतिहास पेश कर रहे हैं।

१९६० का झंझावाती दशक
और भारत के राजनीतिक परिदृश्य पर इसका प्रभाव

महान बहस से शुरू करते हुए महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति में परिणत होनेवाले 1960 के झंझावाती दशक ने दुनिया भर के मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के बीच नया ध्रुवीकरण पैदा कर दिया। मालेमा को अपनी मार्गदर्शक विचारधारा मानते हुए नयी-नयी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ उभरने लगीं।

१९६७ में नक्सलबाड़ी में छिड़ी सशस्त्र किसान क्रान्ति ने भारतीय जनवादी क्रान्ति के इतिहास को एक बड़ा ही निर्णायक मोड़ दिया। १९५१ के बाद तेलंगाना में संशोधनवादी नेतृत्व के विश्वासघात के बाद नक्सलबाड़ी ने भारत की सशस्त्र किसान क्रान्ति में सचमुच एक निर्णायक मोड़ ला दिया। भाकपा (माले) को यह गौरव प्राप्त होता है कि इसने सशस्त्र किसान क्रान्ति की शुरुआत की और पुनप्रा-वायलार, तेभागा और तेलंगाना के बहादुराना सशस्त्र किसान संघर्ष के वारिस के रूप में उसे आगे बढ़ाया। नक्सलबाड़ी का संघर्ष तेलंगाना के महान सशस्त्र किसान संघर्ष से आगे बढ़कर लगायी गयी छलांग थी, क्योंकि यह जड़ जमाये संशोधानवादी नेतृत्व के खिलाफ सघन विचारधारात्मक संघर्ष तथा विद्रोह का परिणाम था।

मार्क्सवादी-लेनिनवाद-माओवाद के मार्गदर्शन में नक्सलबाड़ी में छिड़ा सशस्त्र किसान क्रान्तिकारी संघर्ष भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन को कैंसर की तरह पीड़ित करने वाले संशोधनवाद के खिलाफ पहला गम्भीर प्रहार था। यही वजह है कि एक साथ संशोधानवादी व काँग्रेसी शासक इस सशस्त्र किसान क्रान्ति को खून की नदियों में डुबोने के इरादे से कूद पड़े। इस किसान क्रान्ति ने जहाँ देशभर में पूरी नयी पीढ़ी को प्रेरणा दी, वहीं इसने शासक वर्गों की नींद भी उड़ा दी। नक्सलबाड़ी की चिनगारियाँ देश के कोने-कोने तक पहुँचीं - श्रीकाकुलम, मुसहरी, देबरा-गोपीवल्लभपुर, लखीमपुर

खिरी और बीरभूम तक। भारतीय समाज के हजारों सर्वोत्कृष्ट बेटे-बेटियों ने क्रान्ति के खातिर अपने प्राणों की आहूति देकर शहादत दी।

हालांकि बाद में क्रान्तिकारी आन्दोलन को सामयिक पराजय का सामना करना पड़ा, फिर भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की चमकता लाल झण्डा और नक्सलबाड़ी की लौ देश के विभिन्न हिस्सों में अपनी रोशनी बिखेरती रहीं। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के बीज अब विशाल भारत भूमि में जम गये थे। दक्षिणपंथी अवसरवाद और वामपन्थी भटकावों से जूझते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन ने दोबारा ताकत अर्जित कर ली। 1972 के पैमानों को काफी पीछे छोड़ते हुए यह अब बहुत आगे तक विकास करता गया। दुश्मन की गोलियाँ अपने सीने में खाने वाले साथियों की वीरोचित कुर्बानियाँ व्यर्थ नहीं गयीं। दुश्मन के दमनकारी युद्ध को करारा जवाब दिया गया और आन्दोलन उत्तरोत्तर ऊँचे स्तरों तक पहुँचने लगा।

सीपीआई(एमएल)पीपुल्स वार और **सीपीआई (एमएल) पीयू** के उदय तथा विकास का इतिहास इसी तूफानी दौर के साथ अविभाज्य रूप से जुड़ा है। इतिहास के पिछले 35 सालों में हमने न केवल मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के चमकते लाल झण्डे को लगातार ऊँचा उठाये रखा है, बल्कि हमने अपने क्रान्तिकारी व्यवहार के दौरान भारत की ठोस परिस्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद को लगातार अमल में भी उतारा है। अपने व्यवहार के दौरान दोनों पार्टियों ने आन्दोलन के सकारात्मक तथा नकारात्मक अनुभवों का मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के आधाार पर विश्लेषण तथा संश्लेषण करते हुए क्रान्तिकारी कार्यदिशा (लाइन) को अधिक समृद्ध तथा विकसित किया है। इस रोशनी में उन्होंने किसान जनता को, खासकर गरब एवं भूमिहीन किसानों को गोलबन्द करते हुए तथा उन पर भरोसा करते हुए देहाती क्षेत्र में खेतिहर क्रान्तिकारी छापामार युद्ध को विकसित किया और इस प्रकार दीर्घकालिक जन युद्ध को जारी रखने तथा विकसित करने में अनेक शानदार सफलताएँ हासिल कीं। उन्होंने प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों द्वारा साम्राज्यवाद के समर्थन से छेड़े गये अनेक दमनकारी अभियानों और अनवरत घोर दमन का प्रतिरोध करते हुए अपने संघर्ष को लगातार जारी रखा।

जन युद्ध को आगे बढ़ाने और जन सेना खड़ी करने व आधार इलाके स्थापित करने की लाइन को लागू करने के दौरान ही नक्सलबाड़ी तथा सीपीआई(एमएल)की विरासत को आगे बढ़ाने वाली दो पार्टियों सीपीआई(एमएल)पीडब्ल्यू और सीपीआई(एमएल)पीयू का अगस्त 1998 में एकीकृत सीपीआई(एमएल)पीडब्ल्यू में विलय हो गया। ये दोनों पार्टियाँ 22 अप्रैल 1969 को गठित सीपीआई(एमएल) का अंग रह चुकी हैं। इन दोनों ने अविभाजित सीपीआई(एमएल) की 8वीं काँग्रेस अर्थात् सीपीआई(एमएल) के रूप में भारत की पुनर्गठित क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी की पहली काँग्रेस द्वारा पारित क्रान्तिकारी लाइन को आगे बढ़ाया है। दोनों पार्टियों ने आठवीं काँग्रेस के पार्टी कार्यक्रम एवं पार्टी संविधान को अपनाया और नक्सलबाड़ी किसान उभार के बाद से सीपीआई(एमएल) के अनुभवों का सार-संकलन किया तथा अतीत के इन्हीं अनुभवों के संश्लेषण से निकलीं शिक्षाओं के आधार पर अपने पूरे-के-पूरे क्रान्तिकारी व्यवहार को आगे जारी रखा।

नयी पार्टी छापामार सेना पीजीए तथा छापामार ज़ोन विकसित करने में सफल रही, जिनकी दिशा दीर्घकालिक जन युद्ध की देहाती क्षेत्रों से शहरों को घेरने की रणनीति के अनुसार आन्ध्र, झारखण्ड, बिहार, दण्डकारण्य व उड़ीसा के व्यापक देहाती क्षेत्रों में एक परिपूर्ण पीएलए तथा आधार इलाके स्थापित करने की रही है। कई इलाकों में इसने स्थानीय स्तर पर नयी जनवादी सरकार के भ्रूण के रूप में क्रान्तिकारी राजनीतिक जन सत्ता कायम कर ली।

साढ़े तीन दशकों के इस अन्तराल में सीपीआई(एमएल) तथा सीपीआई(एमएल) से टूटकर बने विभिन्न संगठनों और अन्य माओवादी संगठनों के हजारों कामरेडों ने देश के क्रान्तिकारी आन्दोलन को आगे बढ़ाने के दौरान अपने प्राणों की आहूति दी। इनमें इन पार्टियों के कई वरिष्ठ नेताओं के साथ ही बहुत सारे बुद्धिजीवी भी शामिल रहे। अनेक प्लेनम, सम्मेलनों और अन्य समीक्षा बैठकों के जरिये निरन्तर समीक्षा की प्रक्रिया से गुजरते हुए, 9वीं काँग्रेस जिसकी परिणति रही, पार्टी विकसित हुई है। पिछले साढ़े तीन सालों के दौरान सीपीआई(एमएल)पीडब्ल्यू की 9वीं काँग्रेस की समृद्ध लाइन के आधार पर किये गये व्यवहार से कुछ प्रदेशों में आन्दोलन में आये उतार के बावजूद समग्रता

में आन्दोलन आगे बढ़ पाया है।

नयी क्रान्तिकारी लाइन का विचाराधात्मक-राजनीतिक आधार

जनवरी 1965 से 1967 के बीच लिखे गये कामरेड चारू मजुमदार के ऐतिहासिक आठ दस्तावेजों ने भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के भीतर की क्रान्तिकारी धारा के संशोधानवाद के साथ गुणात्मक विच्छेद का विचारधारात्मक-राजनीतिक आधाार तैयार किया और महान नक्सलबाड़ी जनउभार के लिए मार्ग प्रशस्त किया। ये दस्तावेज भारत की ठोस स्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्सेतुंग विचारधारा का सृजनात्मक अमली रूप थे। ये इस अर्थ में ऐतिहासिक हैं कि इनसे संसदीय जड़वामनता से दूर हटना फौरन शुरू हो गया और अब तक भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन में जड़ जमाये संशोधनवाद से लड़ते हुए मजबूती के साथ क्रान्तिकारी राजनीति प्रस्तुत हुई थी।

इस प्रकार भाकपा और माकपा के भीतर विचारधारात्मक-राजनीतिक संघर्ष के दौरान लिखे कामरेड सीएम के इन **आठ दस्तावेजों** में गठित होने वाली नयी पार्टी की क्रान्तिकारी लाइन के बहुत सारे पहलू पाये जाते हैं । इन पहलुओं ने ऐतिहासिक नक्सलबाड़ी संघर्ष के लिए सैद्धान्तिक बुनियाद का काम किया। ये दस्तावेज नयी पार्टी के गठन तथा क्रान्तिकारी आन्दोलन के भावी विकास के लिए राजनीतिक तथा विचारधारात्मक आधार भी बने। यही नहीं, कामरेड सीएम ने ख्रुश्चेवपन्थी संशोधनवाद के खिलाफ संघर्ष में अन्तरराष्ट्रीय बहस में भी भूमिका अदा की। सोवियत संघ को सामाजिक साम्राज्यवादी की श्रेणी में रखनेवालों में वे पहले व्यक्तियों में रहे। कुछ अन्य लोगों के साथ मिलकर उन्होंने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति को दूसरे देशों तक ले जाने की बुनियाद रखी।

नक्सलबाड़ी जनउभार

जनउभार हालांकि थोड़े समय में दबा दिया गया, फिर भी भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में इसने बड़ा भारी महत्व ग्रहण किया। यह भाारतीय राजनीति में ऐतिहासिक सन्धि-काल बना। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि नक्सलबाड़ी के बाद भारतीय राजनीति पहले जैसी नहीं रही, क्योंकि इसके असर से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा। नक्सलबाड़ी की चिंगारी जल्द ही दावानल बन गयी। इसकी आग ने भारत के व्यापक भूखण्डों को, मसलन श्रीकाकुलम, बीरभूमि, देबरा-गोपीवल्लभपुर, मुसहरी, लखीमपुर खिरी आदि को समेट लिया। अगले कुछ वर्षों में यह सशस्त्र किसान आन्दोलन एक दर्जन से ज्यादा प्रदेशों तक फैल गया।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने नक्सलबाड़ी के जनउभार को **भारत पर बसन्त के वज्रनाद** के रूप में सराहा। इसने भारत के क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों का आह्वान किया कि ''आम किसान जनता को बहादुराना तरीके से जागृत करो, क्रान्तिकारी सशस्त्र बलों को खड़ा करो तथा विस्तारित करो, जनयुद्ध की समग्र लचीली रणनीति एवं कार्यनीति को प्रयोग में लाते हुए क्रान्तिकारी बलों से अस्थाई तौर पर ज्यादा मजबूत साम्राज्यवादियों तथा प्रतिक्रियावादियों के सशस्त्र दमन से निबटो .....''

नक्सलबाड़ी का जनउभार 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध में दुनिया भर में आये क्रान्तिकारी उफान का अनिवार्य अंग रहा। यह कामरेड माओ के मार्गदर्शन में सीपीसी के नेतृत्व में दुनिया को झकझोरने वाले महान विचारधारात्मक-राजनीतिक मन्थन की उपज था। एक ओर कामरेड माओ के नेतृत्व में सीपीसी और दूसरी ओर भगौड़े ख्रुश्चेव के अधीन संशोधनवादी सोवियत पार्टी (सीपीएसयू) के बीच चले **महान बहस** ने समूची दुनिया में कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच ध्रुवीकरण की प्रक्रिया शुरू कर दी थी।

दुनिया के दूसरे देशों की तरह भारत में भी इस संघर्ष ने कम्युनिस्ट खेमे के बीच तीखा स्वरूप ग्रहण कर लिया। इस प्रकार नक्सलबाड़ी जिस हद तक अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में संशोधनवाद और क्रान्ति के बीच के तीखे

संघर्ष को अभिव्यक्त कर रहा था, उसी हद तक यह भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में भी अभिव्यक्त कर रहा था। यह भाकपा और माकपा के भीतर की उन क्रान्तिकारी शक्तियों की लामबन्दी का केन्द्र बिन्दु बन गया जिन्होंने नयी क्रान्तिकारी पार्टी के गठन की प्रक्रिया को चलाने की शुरुआत की। माकपा के भीतर के क्रान्तिकारियों ने कलकत्ते में बैठक कर **नक्सलबाड़ी किसान संघर्ष सहायता कमेटी** का गठन कर लिया। भारतीय क्रान्ति की कार्यसूची पर फिर से सशस्त्र संघर्ष को स्थान देकर इसने पूरे उपमहाद्वीप के माओवादियों को मर-मिटने के लिए तैयार होने का आह्वान किया।

नक्सलबाड़ी ने देश की जनता को व्यावहारिक तौर पर सशस्त्र संघर्ष का रास्ता दिखाया। इसने न केवल सिद्धान्त में संशोधानवाद के साथ निर्णायक विच्छेद किया, बल्कि व्यवहार में भी इसका रास्ता दिखाया। इस प्रकार इसने जनयुद्ध और सशस्त्र बल से सत्ता हथियाने के रास्ते के बीज बो दिये। ***''नक्सलबाड़ीएकहीरास्ता!''*** भारत के साथ ही समूचे दक्षिण एशिया के सच्चे क्रान्तिकारियों का नारा बन गया।

पार्टी गठन और सशस्त्र किसान उभार
(१९६७-७२)

देश के विभिन्न प्रदेशों में जंगल की आग की तरह नक्सलबाड़ी की तर्ज़ पर संघर्षों के फैलने की इसी पृष्ठभूमि में यह फौरी जरूरत बनी कि इन संघर्षों के बीच तालमेल करने वाला एक केन्द्र हो, एक केन्द्रीकृत क्रान्तिकारी भूमिगत पार्टी हो, नये किस्म की लेनिनवादी पार्टी हो।

नक्सलबाड़ी जनउभार के सतह पर आने के दो साल बाद नयी पार्टी का गठन हुआ। मगर यह कहा जा सकता है कि क्रान्तिकारी पार्टी के गठन के लिए विचारधारात्मक-राजनीतिक संघर्ष 1964 में ही, 7वीं काँग्रेस के समय से ही चल पड़ा था। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, 1964-67 के बीच कामरेड सीएम के **आठ दस्तावेजों** ने ऐसी पार्टी के लिए विचारधारात्मक-राजनीतिक आधार प्रदान किया। नक्सलबाड़ी और उसके तत्काल बाद इस तरह के अनेक आन्दोलनों ने क्रान्तिकारी पार्टी के गठन की प्रक्रिया तेज कर दी

क्योंकि इन सशस्त्र कृषि क्रान्तिकारी आन्दोलनों में तालमेल बैठाना बेहद फौरी तौर पर जरूरी हो गया था। नयी पार्टी के गठन की ओर पहला सांगठनिक कदम नवम्बर 1967 में अ**खिल भारतीय तालमेल कमेटी** के गठन से उठा था। इसने अपना घोषणापत्र जारी किया जिसे पीकिंग रेडियो ने भी प्रसारित किया।

छः महीने बाद 14 मई 1968 को नक्सलबाड़ी किसान उभार की वर्षगाँठ की पूर्वसन्ध्या पर कमेटी ने नया घोषणापत्र जारी करने और कामरेड सुशीतल राय चौधरी के संयोजकत्व में कमेटी का नाम बदलकर **अखिल भारतीय कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की तालमेल कमेटी (एआईसीसीआर)** रखने का फैसला किया। इन क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजी में लिबरेशन और बांग्ला में देशब्रती के नाम से राजनीतिक पत्र जारी किये। नक्सलबाड़ी के उफान के बाद बहुत सारे सच्चे क्रान्तिकारी माकपा के नेतृत्व के खिलाफ विद्रोह करते हुए उसे छोड़कर एआईसीसीआर में शामिल हो गये।

एआईसीसीआर के नये **घोषणापत्र** ने भारतीय क्रान्ति के निशाने तथा दोस्त और देश की मुक्ति का रास्ता सही तरीके से समझाया।

इसने सभी क्रान्तिकारियों को नयी पार्टी के निर्माण के लिए सारी शक्तियों को एक करने का आह्वान इस प्रकार किया :

''इस ऐतिहासिक घड़ी में हम देश भर के उन सभी क्रान्तिकारियों से एक बार फिर अपील करते हैं जो अध्यक्ष माओ की विचारधारा को स्वीकार करत हैं कि अपनी शक्तियों को एकताबद्ध करें तथा अपने संघर्षों के बीच तालमेल करें, ताकि भारतीय क्रान्ति की विजय और करीब आ सके। आइये, हम अध्यक्ष माओ की विचारधारा के लाल झण्डे के तहत लामबन्द हों, उनकी विचारधारा पर भारत की ठोस स्थितियों में अमल करें। आइये, हम नक्सलबाड़ी की तर्ज़ पर क्रान्तिकारी संघर्षों को छेड़ने के दौरान भारत की सच्ची कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण करें, क्योंकि क्रान्तिकारी पार्टी के बिना क्रान्ति विजयी नहीं हो सकती।''

एआईसीसीआर के नेतृत्व के अधीन तकरीबन 13 प्रदेशों में वहाँ के सशस्त्र खेतिहर संघर्षों की बढ़ती लहरों के बीच तालमेल करने के लिए और उनका नेतृत्व करने के लिए **प्रदेश तालमेल कमेटियाँ** गठित की गयीं।

इन आन्दोलनों का मार्गदर्शन करनेवाले कामरेड चारू मजुमदार के नेतृत्व में **एआईसीसीसीआर** ने नये किस्म की पार्टी के निर्माण के लिए **पार्टी संगठन** पर प्रस्ताव पारित किया और कामरेड लेनिन के सौंवे जन्म दिवस 22 अप्रैल 1969 को भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) का जन्म हुआ। देश के अनेक क्षेत्रों में कई संघर्ष चलाने और अखिल भारतीय स्वरूप अख्तियार करने के बाद पार्टी ने मई 1970 में 8वीं कांग्रेस आयोजित की और कामरेड सीएम केन्द्रीय कमेटी के सचिव बन गये।

पार्टी की यह 8वीं काँग्रेस जनवरी 1965 में कामरेड चारू मजुमदार के पहले दस्तावेज के प्रकाशन के बाद तत्कालीन पार्टी में गहरी जड़ जमाये संशोधानवादी रुझानों के विरुद्ध चलाये गये सतत विचारधारात्मक-राजनीतिक संघर्ष की परिणति थी। पार्टी ने विभिन्न प्रदेशों में सशस्त्र किसान आन्दोलन का नेतृत्व करने में और संशोधनवाद तथा अर्थवाद के खिलाफ संघर्ष करने में क्रान्तिकारियों द्वारा हासिल अनुभवों का संश्लेषण किया।

भारत की ठोस स्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के सिद्धान्त पर ठोस रूप से अमल करते हुए काँग्रेस ने भारतीय समाज का चरित्र अर्द्ध-औपनिवेशिक व अर्द्ध-सामन्ती के रूप में सही तरीके से विश्लेषित किया, समाजवादी परिप्रेक्ष्य के साथ नयी जनवादी क्रान्ति की आम कार्यदिशा प्रस्तुत की और देहाती क्षेत्रों से शहरों को घेरने की दीर्घकालिक जन युद्ध की रणनीतिक कार्यदिशा प्रस्तुत की। यह ऐतिहासिक काँग्रेस भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की तारीख में एक ऐसा गुणात्मक मोड़ था जिसने दशकों से चले आये संशोधनवादी व्यवहार को समाप्त कर दिया और भारतीय क्रान्ति के लिए नया क्रान्तिकारी रास्ता आलोकित किया। इस काँग्रेस ने दोनों तरह के संशोधनवाद को खारिज किया, भाकपा के ख्रुश्चेवी संशोधानवाद को और 1964 की 7वीं काँग्रेस से पार्टी का चरित्र तय कर रहे माकपा के नव-संशोधनवाद को जो सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी से समान दूरी की आड़ ले रहा था। **भाकपा(माले)** नये किस्म की पार्टी रही, एक भूमिगत पार्टी जिसने संसदीय रास्ता खारिज किया, संशोधनवाद की सभी किस्मों का विरोध किया और अन्ततः देहाती क्षेत्रों से सत्ता दखल करते हुए आखिर शहरों

को घेरते हुए देशव्यापी विजय हासिल करने की दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन सामने लायी।

भारत की इस पुनर्गठित कम्युनिस्ट पार्टी की पहली काँग्रेस के रूप में, संशोधनवाद के सभी रूप-रंगों से हमेशा के लिए पूरी तरह नाता तोड़ देने वाली पहली काँग्रेस के रूप में, भारतीय क्रान्ति के लिए नयी क्रान्तिकारी लाइन स्थापित करने वाली काँग्रेस के रूप में भारत के क्रान्तिकारी इतिहास में इस 8वीं काँग्रेस को अनोखा व स्थायी स्थान प्राप्त हुआ है।

दावानल की तरह आन्दोलन का विस्तार

किसानों के सशस्त्र संघर्ष जल्द ही नक्सलबाड़ी के रास्ते पर जंगल की आग की तरह फैलते गये - श्रीकाकुलम, लखीमपुर खिरी (तराई), मुसहरी, देबरा-गोपीवल्लभपुर, बीरभूम और देश के अन्य क्षेत्रों, जैसे पंजाब, पश्चिम बंगाल व आन्ध्र प्रदेश के अन्य भागों में, तमिलनाडू, केरल, उत्तर प्रदेश आदि में। इस तरह सशस्त्र क्रान्तिकारी किसान संघर्ष नक्सलबाड़ी से शुरू होकर देश के अनेक भागों तक फैलते गये। पश्चिम बंगाल में स्थित आन्दोलन के केन्द्र-बिन्दु के अलावा आन्ध्र प्रदेश और बिहार प्रदेशों में इसका मजबूत आधार रहा।

इन आन्दोलनों के परिणामस्वरूप देश में पहली बार क्रान्तिकारी कमेटियों के गठन के जरिये जनता की क्रान्तिकारी सत्ता को भ्रूण रूप में स्थापित किया गया। ये प्रयास श्रीकाकुलम, बीरभूम तथा अन्य इलाकों में भी खास तौर पर सार्थक रहे। पहली बार दुश्मन के बलों एवं जमींदारों से हथियार छीने गये और जन मुक्ति सेना के भ्रूण के रूप में छापामार टुकड़ियाँ भी बनने लगीं। इसी कारण से दीर्घकालिक जन युद्ध का रास्ता अस्तित्व में आया। केवल सिद्धान्त के माध्यम से ही नहीं, वरन् उपरोक्त क्रान्तिकारी सशस्त्र संघर्षों के ठोस व्यवहार के माध्यम से भी।

कामरेड सी0एम0 की शहादत

16 जुलाई 1972 को किसी कोरियर (सन्देशवाहक) को क्रूर यातना देकर उससे सूचनाएँ उगलवाकर कलकत्ते के एक शेल्टर से कामरेड सीएम को

गिरफ्तार कर लिया गया। अपनी गिरफ्तारी के समय कामरेड सीएम हृदय रोग से सम्बन्धित दमे की बीमारी ग्रस्त थे। 12 दिनों तक पुलिस हिरासत में रखे जाने के दौरान उन्हें किसी से मिलने तक का मौका नहीं दिया गया। 28 जुलाई को दिन उगने से पहले उनका देहान्त हो गया। उनकी मृत्यु के बाद भी पुलिस इतनी भयभीत रही कि उसने पूरे इलाके को भारी बलों के सहारे शहर से काट दिया। उनके करीबी पारिवारिक सदस्यों के अलावा किसी को भी उनके मृत शरीर के पास नहीं जाने दिया गया।

कामरेड सीएम की शहादत से भारतीय क्रान्ति को ही नहीं, वरन् विश्व क्रान्ति को भी बहुत बड़ा नुकसान पहुँचा। इसके साथ ही संशोधनवादियों के विश्वासघात के दशकों बाद मुकम्मिल विचारधारात्मक-राजनीतिक बुनियाद पर खड़े होकर छेड़े गये भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन और पुनर्गठित पार्टी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी(मार्क्सवादी-लेनिनवादी) के इतिहास के पहले गौरवशाली आध्याय का अन्त हो गया।

१९७२ के बाद की सामयिक पराजय और नये उफान की तैयारियाँ (१९७२-७७)

मुख्यत: चार पहलुओं के आधार पर इस बेहद निर्णायक दौर का विश्लेषण किया जा सकता है:

पहला यह कि भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के लिए यह सबसे कठिन दौर रहा। उन दिनों मार्क्सवादी-लेनिनवादी-माओवादी खेमे का प्रत्येक कम्युनिस्ट अग्नि-परीक्षा से गुजर रहा था। देखना यह था कि कौन दुश्मन के हमलों का सामना कर पाता है और कौन घुटने टेक देता है, कौन उत्पीड़ित जनता के साथ दृढ़ता से खड़ा हो पाता है और कौन दुश्मन के खेमे की ओर भाग खड़ा होता है, कौन मार्क्सवादी-लेनिनवादी-माओवादी सबक ले पाता है और कौन संशोधनवादी सबक लेता है, कौन सचमुच पहल करके जनता को जन युद्ध के लिए फिर से संगठित कर पाता है और कौन केवल बहसों में उलझ जाता है, कौन सच्चे व सक्षम नेता के रूप में उभरता है और कौन नकली के रूप में ?

दूसरा यह कि यह राजकीय शक्तियों के भारी दमन के बीच राजनीतिक एवं विचारधारात्मक विभ्रम का दौर रहा। इसी दौर में भगौड़ापन, विश्वासघात, टूट-फूट और निष्क्रियता हालात को और संगीन बना रही थी।

तीसरा यह कि यह वह दौर भी रहा जब धारा के विपरीत बहने वालों तथा सीमित इलाकों में सशस्त्र संघर्ष पर अडिग रहने वालों ने महान, वीरोचित बलिदान दिये और बेइन्तहाँ साहस का परिचय दिया।

और आखिर में यह कि यह अतीत की समीक्षा करने, सबक लेने, कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के पुनःएकीकरण के लिए प्रयास शुरू करने, एक ओर नये उफान की तैयारियाँ करने और दूसरी ओर अवसरवादी तत्वों का पर्दाफाश करने का बेहद निर्णायक दौर भी रहा।

आन्दोलन की सामयिक पराजय और पार्टी की फूटें

कुछ राजनीतिक तथा सांगठनिक कमजोरियों, जिसमें गम्भीर कार्यनीतिक भूलें भी शामिल हैं, तीखे दमन एवं बड़े नुकसानों, अनुभवहीनता तथा दक्षिणपन्थी अवसरवादियों द्वारा अन्दरूनी तोड-फोड़ की कार्रवाइयों और इनके फलस्वरूप हुई सामयिक पराजय तथा राजनीतिक/विचारधाारात्मक भ्रान्तियों के परिणामस्वरूप पार्टी में फूट पड़ने लगी। पार्टी की पहली फूट नवम्बर 1971 में एसएनएस के विश्वासघात से पैदा हुई। कामरेड सीएम की शहादत के बाद साल भर के भीतर पार्टी कई-कई खण्डों में विभाजित हो गयी। 8वीं काँग्रेस के बाद केवल दो सालों के भीतर अनेकों केन्द्रीय कमेटी सदस्यगण शहीद हो गये, कुछ गिरफ्तार हुए और कुछ अन्य भटक गये या धोखा दे गये। शेष बचे दो सीसीएम कामरेड शर्मा और सुनीती कुमार घोष के प्रदेश कमेटियों के साथ जीवन्त रिश्ते नहीं रहे।

इस प्रकार भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन में 1972 के बाद के दौर में पार्टी कई छोटे-छोटे ग्रूपों में बँटती गयी। इनमें से कुछ कालान्तर में अलग-अलग लाइन और व्यवहार लागू करने वाली स्वतन्त्र पार्टियों के रूप में सुदृढ़ हो गये। कुछ ने 1967-72 के गौरवशाली संघर्षों के क्रान्तिकारी इतिहास के असली वारिस होने का दावा करते हुए अपनी-अपनी नयी सीसी का गठन कर लिया, जबकि कुछ अन्य ने सभी क्रान्तिकारी शक्तियों को एकताबद्ध करने व

भाकपा(माले) को पुनर्गठित करने की अपनी इच्छा जाहिर की।

1972 की सामयिक पराजय और पार्टी का अनेकों छोटे-छोटे ग्रूपों के रूप में विखण्डन हमारी पार्टी के इतिहास का सबसे अन्धकारमय अध्याय रहा है। सीसी के भंग हो जाने पर भारतीय क्रान्ति के लिए कोई केन्द्र न रह जाने के कारण सहसा ऐसे अलग-थलग ग्रूप तथा पार्टियाँ अस्तित्व में आयीं जो 1980 तक चन्द इलाकों या प्रदेशों तक सीमित रहीं।

देश के कुछ हिस्सों में एक ओर भूतपूर्व **सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू** एवं **सीपीआई (एमएल) पीयू** तथा कुछ अन्य संगठन और दूसरी ओर **एमसीसी** जैसे विभिन्न नये केन्द्रों के नेतृत्व में आन्दोलन के पुनर्जीवित होने पर क्रान्तिकारी जनता में नयी आशाएँ जग गयीं। **भाकपा(माले)** के कुछ ग्रूप 1980 तक आते-आते मृतप्राय हो गये, कुछ और ज्यादा विखण्डित होते गये और कुछ संशोधनवादी बन गये।

एमएल खेमे मे तीन रुझान

1970 के दशक के उत्तरार्द्ध में भाकपा (माले) और अन्य कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी ग्रूपों की शक्तियों का मोटे तौर पर तीन रुझानों के तहत स्पष्ट ध्रुवीकरण हुआ:

पहला रुझान - भगौड़े एसएनएस, कानू सन्याल, असीम चटर्जी जैसे संशोधनवादियों, टीएन-डीवी-सीपी रेड्डी आदि जैसे दक्षिणपन्थी विपथगामियों (भटकाव पैदा करने वालों) का है। इन सभी ने नक्सलबाड़ी आन्दोलन पर और कामरेड चारू मजुमदार पर वैमनस्यपूर्ण प्रहार किये। वे पार्टी की बुनियादी लाइन और कार्यक्रम से भटक गये। 1970 के दशक के अन्त तक आते-आते इन सभी की पार्टियाँ संसदीय चुनावों में भागीदारी करने लगीं। इनमें से कुछ ने सशस्त्र दस्ते बनाये तो रखे, पर सुधारवादी व्यवहार में ये आकण्ठ डूब गये और इनका राजनीतिक सत्ता हथियाने के इरादे से अब कोई ठोस व्यवहार नहीं रह गया। (पिछले दो दशकों से इस रुझान में लगातार फूट देखी गयी है जिससे ये विसर्जन, विघटन तथा निष्क्रियता और विश्वासघात तक के शिकार हो गये हैं। समय के साथ बहुत सारे सच्चे क्रान्तिकारी हिस्से या तत्व तीसरे रुझान में

शामिल हो गये।)

दूसरा रुझान – यह वामपन्थी दुस्साहसवादी ग्रूपों का रहा। इसमें महादेव मुखर्जी के नेतृत्व वाला तथा अन्य लिन प्याओ के पक्षधर ग्रूप और कुछ लिन प्याओ-विरोधी ग्रूप भी शामिल हैं, जैसे कामरेड जौहर की शहादत के बाद कुछ वर्षों तक विनोद मिश्र ग्रूप। यही वीएम ग्रूप धीरे-धीरे 1980 के दशक की शुरुआत तक आते-आते अपने विपरीत में बदल गया और संसदीय लाइन पर चल पड़ा। ये वाम दुस्साहसवादी ग्रूप जड़सूत्रवादी तरीके से सफाये की कार्यनीति को लाइन मानते रहे, सशस्त्र संघर्ष के अलावा संघर्ष व संगठन के अन्य किसी भी रूप को अपनाने की आवश्यकता को खारिज़ करते रहे और अतीत की गलतियों से सबक लेने से इन्कार करते रहे। आज यह रुझान समाप्तप्राय हो चुका है। इनमें से कई कामरेड दुश्मन के हाथों मारे गये या निष्क्रिय हो गये, जबकि बचे हुए पहले या तीसरे रुझान में शामिल हो गये।

तीसरा रुझान – यह उन एमएल शक्तियों का है जिन्होंने मूलतः मार्क्सवादी-लेनिनवादी नजरिये से अतीत का सार-संकलन किया, नक्सलबाड़ी आन्दोलन और **भाकपा (माले)** की लाइन के सभी सकारात्मक बिन्दुओं को आत्मसात किया, वाम-संकीर्णतावादी कार्यनीति को त्याग दिया और जन दिशा के आधार पर गम्भीर क्रान्तिकारी व्यवहार में जुट जाना शुरू किया। कामरेड केएस के नेतृत्व वाली सीपीआई (एमएल) की आन्ध्र प्रदेश की प्रान्तीय कमेटी, पंजाब के कामरेड शर्मा, पश्चिम बंगाल के कामरेड सुनीती घोष तथा बाद की **सीपीआई (एमएल) पीयू** और कुछ अन्य ग्रूप इस रुझान में शामिल रहे। ये सभी संगठन मूल **भाकपा (माले)** में शामिल रहे।

1972 के बाद के दौर में ग्रूपों तथा व्यक्तियों की फूट और एकता भारतीय क्रान्तिकारी राजनीति की चारित्रिक विशेषता बन गयी। मा-ले-मा विचारधारा से सम्बन्धित मामलों में जड़सूत्रवाद, सांगठनिक मामलों में तंग संकीर्णता, नेतृत्व के बीच वाम या दक्षिणपन्थी अवसरवाद और निम्न-पूँजीवादी अहंकार के कारण कोई भी दो ग्रूप स्थायी क्रान्तिकारी एकता हासिल करने में कामयाब नहीं हो पाते रहे।

सामयिक पराजय का सार-संकलन और उसके सबक

1980 के बाद अपने आन्दोलन की समीक्षा करने और इससे उचित सबक निकालने से पहले हमें नक्सलबाड़ी जनउभार, नक्सलबाड़ी के बाद देशभर में आये उफान और बाद की सामयिक पराजय की उपलब्धियों एवं खामियों और शिक्षाओं को याद करना चाहिए। ''हमारी आत्मालोचनात्मक रिपोर्ट (अतीत का सार-संकलन करते हुए सशस्त्र संघर्ष की राह पर विजयपूर्वक आगे बढ़ें)'' जो कि हमारी पार्टी का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज है, में पार्टी के गठन से लेकर 1972 तक के दौर सार-संकलन है। इसे 1974 में आन्ध्र प्रदेश की कमेटी ने तब लिखा था जब वह केन्द्रीय सांगठनिक कमेटी **सीओसी, सीपीआई (एमएल)** में रही। इसे 1980 में **सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू** के गठन के समय समृद्ध किया गया। आठवीं काँग्रेस की सकारात्मक उपलब्धियों को इस रिपोर्ट (एससीआर) में इस प्रकार दर्ज किया गया है -

'आत्मालोचनात्मक रिपोर्ट' **ने रणनीति को लागू करने की कार्यनीति, पद्धति तथा कार्यशैली के सन्दर्भ में भटकावों का आत्मालोचनात्माक मूल्यांकन करते हुए नक्सलबाड़ी के महान उभार, कामरेड सीएम और 8वीं काँग्रेस की पथ-प्रदर्शक भूमिका की सकारात्मक सारवस्तु की हिफाजत की।**

समग्रता में एससीआर ने क्रान्तिकारी आन्दोलन को पुनर्जीवित करने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसने भारत के सच्चे कम्युनिस्ट कान्तिकारियों के पुनः एकीकरण के लिए आधार तैयार किया। **पहले,** इसने पार्टी को अब तक के वाम दुस्साहसवादी रुझान से बाहर निकालने में मदद की और नयी शक्तियों को दोबारा आन्दोलन खड़ा करने के लिए शिक्षित किया तथा पार्टी को सही आधार पर पुनर्गठित करने के लिए मदद पहुँचायी। **दूसरे,** इसने सामयिक पराजय के दौर में हावी रहे दक्षिणपन्थी अवसरवाद के साथ ही वाम संकीर्णता के खिलाफ, विशेषकर पहले रुझान के खिलफ राजनीतिक वाद-विवाद में मदद पहुँचायी। **तीसरे,** इसने आन्दोलन के पुनरुत्थान के लिए सैद्धान्तिक आधार प्रदान करने में मदद पहुँचायी। **चौथे,** इससे पिछली उपलब्धियों की, आलोचनात्मक

रूप से ही सही मजबूती के साथ हिमायत करते हुए इसने कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की पुनः एकीकरण की प्रक्रिया को सुगम बनाया। और **आखिरी** बात यह कि कामरेड सीएम की भूमिका पर सन्तुलित नजरिया अपनाते हुए इसने कम्युनिस्ट आन्दोलन में नेतृत्व की भूमिका पर युक्तियुक्त समझदारी बनाने में मदद की।

पार्टी को पुनर्गठित करने के प्रयास

मार्च 1972 में **आन्ध्र प्रदेश की प्रान्तीय कमेटी** के शेष तीन सदस्य (दो सदस्य नवम्बर में गिरफ्तार हो गये थे) ने नक्सलबाड़ी के दौर की क्रान्तिकारी सारवस्तु को बरकरार रखते हुए भूलों को सुधारने का प्रयास किया। इस कमेटी ने क्रान्तिकारी जन संगठनों का निर्माण करने, आम जनता के वर्ग संघर्ष छेड़ने और नये-नये इलाकों में फैलने का फैसला किया। इसने यह भी तय किया कि वर्ग दुश्मनों के सफाये को केवल वर्ग संघर्ष के हिस्से के रूप में ही चलाया जाय।

अगस्त 1973 में पार्टी ने क्रान्तिकारी शक्तियों को लामबन्द करने के लिए अपनी राजनीतिक पत्रिका *पिलुपू* आह्वान शुरू की। पत्रिका ने राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय मुद्दों पर पार्टी की अवस्थिति से अवगत कराने के साथ ही भाकपा(माले) के भीतर के और एपीसीसीसीआर के बाहर के दक्षिणपन्थी अवसरवादियों के हमलों का करारा जवाब देने के लिए विचारधारात्मक-राजनीतिक जंग चलायी। *पिलुपू* ने सीएम की लाइन की हिफ़ाज़त करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की तथा तत्कालीन आन्दोलन पर व्यापक रूप से हावी दक्षिण तथा 'वाम' भटकावों का बखूबी मुकाबला किया। इसने आन्दोलन को सही रास्ते पर ले चलने में महत्वूर्ण भूमिका निभायी। अगस्त 1974 में कामरेड केएस के नेतृत्व में तीन-सदस्यीय प्रदेश कमेटी को पुनर्गठित किया गया।

केएस के नेतृत्व में **एपीपीसी** ने अन्य प्रदेशों के केन्द्रीय कमेटी सदस्यों से सम्पर्क करने के प्रयास किये और यह पुनर्गठित **केन्द्रीय सांगठनिक कमेटी** में शामिल हुई, जिसमें पंजाब के कामरेड शर्मा, बंगाल के कामरेड सुनिती घोष और बिहार के कामरेड रामनाथ रहे। **सीओसी** ने अतीत का विस्तृत आत्मालोचनात्मक मूल्यांकन करने, टूटकर बने सभी छोटे-बड़े ग्रूपों को जहाँ तक

हो सके एक पार्टी में एकताबद्ध करने और फिर काँग्रेस आयोजित कर केन्द्रीय कमेटी का चुनाव करने के प्रस्ताव पारित किये। लेकिन राजनीतिक मतभेदों के कारण **सीओसी** खुद को एक संगठन के रूप में ढाल नहीं पाया। अब केन्द्र को पुनर्गठित करने के इस पहले प्रयास के ठप्प हो जाने के बाद आन्ध्र प्रदेश के कामरेडों ने अपने प्रदेश में मजबूत कृषि क्रान्तिकारी आन्दोलन खड़ा करने पर अपनी सारी ऊर्जा केन्द्रित की।

जन युद्ध का पुनरुत्थान और विस्तार १९७७-२००१

1977 के बाद के ढाई दशकों में सशस्त्र कृषि क्रान्तिकारी आन्दोलन को आन्ध्र प्रदेश, दण्डकारण्य, उड़ीसा, बिहार-झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र में नये-नये इलाकों की ओर धीरे-धीरे पुनर्जीवित होते और फैलते देखा गया। आन्ध्र प्रदेश के क्रान्तिकारी आन्दोलन का केन्द्र बिन्दु इस दौर में श्रीकाकुलम से हटकर उत्तरी तेलंगाना बना। इस दौर में **सीपीआई(एमएल)पीडब्ल्यू** और **सीपीआई(एमएल)पीयू** का गठन और उनके नेतृत्व में क्रान्तिकारी आन्दोलन का विकास हुआ, जबकि भाकपा(माले) के अधिकांश ग्रूप सुधारवाद, संसदीय पार्टियों या दक्षिणपन्थी अवसरवाद में पतित हो गये।

1972 की सामयिक पराजय का सामना करने पर सांगोपांग समीक्षा के जरिये पूर्ववर्ती दौर से सबक लेने के बाद मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की रोशनी में मुख्यत: पूर्ववर्ती **सीपीआई(एमएल)पीडब्ल्यू** और **सीपीआई(एमएल)पीयू** के नेतृत्व में पार्टी धीरे-धीरे दोबारा ताकतवर हो गयी। पूरी पार्टी को नयी समझदारी से शिक्षित किया गया, व्यवस्थित रूप से सुदृढ़ किया गया और विस्तारित किया गया। इस प्रक्रिया में इसने कुछ अन्य सच्ची शक्तियों को एकीकृत कर लिया और अधिक मजबूत केन्द्र कायम किये। धीरे-धीरे पार्टी का प्रभाव देश के कई हिस्सों में फैलने लगा। आन्तरिक तौर पर भी यह उभर आनेवाली दक्षिणपन्थी अवसरवादी लाइनों को परास्त करते हुए संकटों से उबर पायी और इस तरह राजनीतिक तथा विचारधारात्मक रूप से मजबूत होती गयी। पार्टी ने विदेशों में बिरादराना पार्टियों के साथ भी रिश्ते विकसित किये तथा गहराये। आखिर **भाकपा(माले)** की दो प्रमुख धाराओं का

अगस्त 1998 में विलय हो गया और एकीकृत **केन्द्रीय कमेटी** के तहत एक पार्टी बन गयी। इस विलय के फलस्वरूप कई अन्य सच्चे क्रान्तिकारी भी इस प्रक्रिया में शामिल हो गये।

दो दशकों में सामन्तवाद-विरोधी किसान क्रान्तिकारी सशस्त्र संघर्ष में ब्रेकथ्रू करते हुए पार्टी के जन आधार का काबिलेगौर विकास हुआ। पार्टी छात्रों, युवाओं, मजदूरों, महिलाओं दलितों तथा बुजिीवियों तक में अपना असर फैलाने में कामयाब रही। यह प्रचार, आन्दोलन तथा संघर्षों के जरिये देश के साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन को भी गहरा पायी। कुल मिलाकर पार्टी का जन आधार मजबूत हुआ और नये-नये क्षेत्रों तक विस्तारित हो गया।

इन दो दशकों में क्रान्तिकारी आन्दोलन अनेक घुमावदार व टेढ़े-मेढ़े रास्तों से होते हुए आगे बढ़ा। पार्टी ने देश में, अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर तथा आन्दोलन में आये बदलावों का विश्लेषण किया, तदनुरूप अपनी कार्यनीति में बदलाव किया और अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा आन्दोलन के हिस्से के रूप में देश में क्रान्तिकारी आन्दोलन को आगे बढ़ाया।

सबसे अहम् बात यह है कि ढाई दशकों के इस दौर में पार्टी ने दुश्मन से हथियार छीनते हुए सशस्त्र छापामार दस्ते विकसित किये और खुद को हथियारों से लैस किया। हथियारबन्द टुकड़ियाँ धीरे-धीरे अपनी मजबूती बढ़ाती गयीं और दुश्मन के आक्रमणों का डटकर मुकाबला करते हुए पीछे धकेल पायीं। इससे इस पूरे दौर में सशस्त्र संघर्ष टिका रह सका। इस तरह पार्टी देश के कुछ रणनीतिक इलाकों में **पीजीए** का निर्माण करने और जन सत्ता के निकायों के भ्रूण रूप कायम करने में कामयाब हो पायी।

अन्त में इसने सोवियत तथा देंगपन्थी किस्मों के संशोधनवाद और नवसंशोधनवाद के खिलाफ निरन्तर विचारधारात्मक तथा राजनीतिक लड़ाई लड़ी। देश के भीतर इसने दक्षिणपन्थी अवसरवाद के सभी रूपों का विरोध किया और साथ ही मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद तथा दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन का व्यापक प्रचार किया।

पूर्ववर्ती पीडब्ल्यू का पुनर्गठन और विकास

1970 के दशक में **आन्ध्र प्रदेश की प्रादेशिक कमेटी** (एपीएससी)में यूँ तो बहुत सारे परिवर्तन हुए। मगर इसने अपनी *आत्मालोनात्मकसमीक्षा* को आधार बनाकर पार्टी कतारों को वाम दुस्साहसवाद से बाहर निकालने के गम्भीर प्रयास किये।

1977 में **सीओसी** के मृतप्राय हो जाने के बाद **आन्ध्र प्रदेश की प्रादेशिक कमेटी** ने तत्काल अन्य क्रान्तिकारी ग्रूपों के साथ एकता बनाने के प्रयास नहीं किये। पिछले अनुभवों ने यह सीख दी थी कि बिना किसी सार्थक आन्दोलन के, केवल अतीत की समीक्षा को आधार बनाकर एकता के प्रयास व्यर्थ सिद्ध होते हैं। इसीलिए अब **एपीएससी** ने अपने ***एससीआर*** के आधार पर व्यापक क्रान्तिकारी आन्दोलन खड़ा करने पर सारी ऊर्जा केन्द्रित कर दी। नतीजे के रूप में यह केवल छात्रों, युवाओं, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मोर्चों पर ही सशक्त प्रदेशव्यापी क्रान्तिकारी आन्दोलन नहीं खड़े कर पायी, बल्कि इसने करीमनगर तथा आदिलाबाद जिलों में भी क्रान्तिकारी किसान आन्दोलन विकसित किये। इसके बाद ही **एपीएससी** ने इस आन्दोलन के सफल विकास के आधार पर एकता प्रयासों की पहल की। आन्दोलन के ज्वार से *आत्मालोचनात्मक समीक्षा*का सही होना पुष्ट हुआ और अब यह एकता प्रयासों के आधार के रूप में काम आ सकी। तभी से *एससीआर*और उसकी शिक्षाओं के बल पर खड़े किये गये आन्दोलन के आधार पर **पार्टी यूनिटी** तथा **सीपीआई(एमएल)** की **तमिलनाडू प्रादेशिक कमेटी** जैसे एमएल ग्रूपों ने जब कामरेड केएस के नेतृत्व वाले **एपीपीसी** से पेशकश की, तो उनके साथ एकता के प्रयास किये जाने लगे।

इतिहास की उस निर्णायक घड़ी में महान नक्सलबाड़ी तथा अन्य आन्दोलनों की ऐतिहासिक सार्थकता और भाकपा(माले) की प्रातिनिधिक लाइन का निषेध करते हुए खुद को क्रान्तिकारी बतानेवाले संशोधनवादियों तथा दक्षिणपन्थी अवसरवादियों को बेनकाब करना सच्चे क्रान्तिकारियों का सबसे पहला कार्यभार बन गया। इस पूरे दौर में पार्टी ने सशस्त्र संघर्ष, पार्टी लाइन और कामरेड सीएम पर हमला बोलने वाले एसएनएस, कानू सन्याल, असीम चटर्जी, नागभूषण पटनायक और अन्य नेताओं के

खिलाफ तीखे राजनीतिक वाद-विवाद चलाये।

दक्षिण और 'वाम' रुझानों से, प्रमुखता से दक्षिणपन्थी-अवसरवादी रुझान से लड़ते हुए हमने *'आत्मालोचनात्मक रिपोर्ट'* में समेटी गयी समुचित शिक्षाओं को ग्रहण किया और पार्टी लाइन के सकारात्मक व नकारात्मक पहलुओं का सांगोपांग मूल्यांकन करते हुए अपनी लाइन को समृद्ध किया। इसके साथ ही *'अपनी कार्यनीतिक लाइन'* में सूत्रबद्ध की गयी सही कार्यनीति को भी विकसित किया।

तेलंगाना क्षेत्रीय सम्मेलन

फरवरी 1977 में पार्टी लाइन पर चर्चा को निष्कर्ष तक पहुँचाने और पार्टी दस्तावेजों को पारित करने के लिए **तेलंगाना क्षेत्रीय सम्मेलन** आयोजित किया गया। इसने कुछ महत्वपूर्ण फैसले किये, जैसे: (1) जनता के बीच पार्टी का आधार व्यापक करना, (2) बड़ी तादाद में शामिल होनेवाली नयी कतारों को प्रशिक्षित करने के लिए राजनीतिक कक्षाओं का सिलसिला चलाना, (3) सशस्त्र संघर्ष छेड़ने के लिए दस्तों को जंगल में भेजना। हैदराबाद को छोड़कर तेलंगना के आठ जिलों को दो क्षेत्रों में बाँटा गया और दो क्षेत्रीय कमेटियाँ चुनी गयीं।

कार्यनीति में परिवर्तन - अगस्त १९७७ प्रस्ताव

मार्च 1977 के संसदीय चुनावों में फासीवादी इन्दिरा गांधी बुरी तरह पराजित हो गयी और जनता पार्टी सत्ता में आयी। आपातकाल हटाया गया। जनता पार्टी आपातकाल का विरोध करते हुए और जनवादी अधिकारों की बहाली का अभियान चलाते हुए सत्ता में आयी । इसने ज्यादातर क्रान्तिकारियों को ज़मानत पर रिहा किया। पार्टी पर प्रतिबन्ध हटा लिया गया। इस बदली राजनीतिक परिस्थिति का लाभ उठाने और पहले तेलंगाना क्षेत्रीय सम्मेलन के निर्णयों को लागू करने के लिए *'वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति और हमारे कार्यभार'* नामक दस्तावेज तैयार किया गया। *'अगस्त प्रस्ताव'* के नाम से जाने गये इस दस्तावेज को विभिन्न जिलों में व्यापक चर्चा के बाद पारित किया गया। इसने इस दौर के लिए पार्टी को उचित कार्यनीति प्रदान की। लेकिन हमारे अगस्त प्रस्ताव में ''सशस्त्र संघर्ष के अस्थाई स्थगन'' शब्दों

का प्रयोग गलत रहा। इससे पार्टी और एमएल खेमे में गैर-जरूरी आशंकाएँ और भ्रान्तियाँ पैदा हुईं।

कार्यनीति में बदलाव के अनुरूप पीसी ने अपने आधिकारिक मुखपत्र के रूप में पाक्षिक *क्रान्ति* शुरू की और क्रान्तिकारी साहित्य खुलकर प्रकाशित करना शुरू किया। आरएसयू और आरवायएल की मासिक पत्रिका *रैडिकलमार्च*को कानूनी तरीके से निकाला गया। इन मुखपत्रों ने पार्टी कतारों और छात्रों, युवाओं को राजनीतिक रूप से शिक्षित करने में केन्द्रीय भूमिका निभायी।

रैडिकल शब्द क्रान्तिकारी का पर्यायवाची बन गया। आरएसयू और आरवायएल द्वारा चलाये गये चुनाव बहिष्कार अभियान और 'गाँव चलो अभियान' ने छात्रों तथा नौजवानों को देहात के गरीबों के साथ आत्मसात करने और नयी जनवादी क्रान्ति तथा उसकी धुरी सशस्त्र कृषि क्रान्ति की राजनीति का प्रसार करने में मदद पहुँचायी। 1978 के पहले अभियान में करीब 200 छात्र शामिल हुए, जबकि 1984 तक आते-आते यह संख्या इतनी बढ़ी कि 1100 छात्रों-युवाओं ने 150 प्रचार टीमों में संगठित होकर 2419 गाँवों तक कृषि क्रान्ति की राजनीति पहुँचायी।

क्रान्तिकारी छात्र आन्दोलन के तेज विकास, आन्ध्र प्रदेश के छात्रों-युवाओं के उग्र परिवर्तनकारी राजनीतिकरण और देहाती किसान जनता के साथ उनके घुलमिल जाने ने शासक वर्गों की नींद उड़ा दी। **आरएसयू** प्रदेश के 21 में से 18 जिलों तक फैल गया और विभिन्न मुद्दों पर छात्रों की प्रदेशव्यापी हड़तालें संगठित करता रहा। इसने प्रदेश के बहुत सारे कालेजों के छात्र संघों पर कब्जा कर लिया और साम्राज्यवाद, युद्ध, साम्प्रदायिकता के खिलाफ तथा मजदूर वर्ग, किसान जनता और राष्ट्रीयता आन्दोलन के समर्थन में राजनीतिक आन्दोलन संगठित किये। इसने **'चुनाव बहिष्कार अभियानों'** में सक्रिय हिस्सेदारी की। इसने **एआईआरएसएफ (अखिल भारतीय रेवोल्यूशनरी स्टूडेण्ट फेडरेशन)** गठित करने की पहल की। 1985 की शुरुआत में शासक वर्गों ने छात्रों एवं युवाओं के संगठनों पर चौतरफा हमले शुरू करने के साथ-साथ किसानों एवं मजदूर वर्ग के आन्दोलनों पर भी आक्रामक कार्रवाइयाँ कीं। तब से लगभग सभी

जन संगठन पूर्ण गोपनीयता से काम करने लगे।

इस तरह पार्टी ने पूरे प्रदेश में सांस्कृतिक व साहित्यिक संगठनों के मार्फत मजदूर वर्ग, किसानों, छात्रों व युवाओं के संघर्षों की लहर खड़ी करके आपातकाल के तत्काल बाद के दौर का कारगर तरीके से लाभ उठाया। आपातकाल समाप्त किये जाने से पहले और तत्काल बाद नागरिक अधिकार आन्दोलन में भी तेज़ी आयी। इस दौर में पार्टी की नयी कार्यनीति ने जनता के विभिन्न तबकों के बीच क्रान्तिकारी जन आधार का सुदृढ़ीकरण तथा विस्तार करते हुए और सशस्त्र संघर्ष का स्तर ऊँचा करने की तैयारी करते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन के पुनरुत्थान में बड़ी सहायता की। संघर्ष और संगठन के कानूनी एवं गैर-कानूनी रूपों के बीच कारगर तरीके से मेल किया गया। पार्टी ने दुश्मन की कार्यनीति के अनुरूप खुले, अर्द्ध-खुले तथा गुप्त जन संगठनों और इन रूपों का आपस में उचित तालमेल करते हुए खुले तथा भूमिगत जन कार्यों को संगठित किया। इस दौरान पार्टी ने अपना गोपनीय ढाँचा कायम रखा।

करीमनगर और आदिलाबाद के किसान संघर्षों का उफान

जून 1978 में जगित्याल का किसान संघर्ष झंझावत की तरह उठ खड़ा हुआ। तीन महीनों तक सरकार ने क्रूर दमन का दौर चलाया और अक्टूबर में जगित्याल व सिरिसिल्ला तहसीलों को ''अशान्त क्षेत्र'' घोषित कर दिया। प्रादेशिक कमेटी ने इन संघर्षों का विस्तार करने के साथ ही इस दमन के बीच सुदृढ़ीकरण करने के लिए सम्यक योजना बनायी। नतीजतन थोड़े ही समय में करीमनगर व आदिलाबाद जिलों में चारों ओर किसान संघर्ष उभर आये। 1979 के अन्त तक छात्र, युवा, मजदूर, किसान और साहित्यिक मोर्चों पर पार्टी कार्य आन्ध्र प्रदेश के कोने-कोने तक पहुँच चुके थे। करीमनगर और आदिलाबाद के किसान संघर्षों की लहर पार्टी को वाम दुस्साहसवादी लाइन से सही क्रान्तिकारी लाइन की ओर रूपान्तरित करने के उन लम्बे प्रयासों का परिणाम रही, जो फरवरी-मार्च 1972 की **प्रादेशिक कमेटी** बैठक के *प्रस्तावों*, 1974 की *आत्मालोचनात्मक रिपोर्ट*, जनवरी 1977 के पहले **तेलंगाना क्षेत्रीय सम्मेलन** और अगस्त 1977 के *प्रस्ताव* के माधयम से किये गये थे।

1979 के अन्त तक पार्टी के सामने करीमनगर, आदिलाबाद, वारंगल और खम्मम में आधार इलाके कायम करने के परिप्रेक्ष्य के साथ छापामार ज़ोन विकसित करना पार्टी के सामने फौरी कार्यभार के रूप में आ उपस्थित हुआ। इस वक्त आन्ध्र प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में चल रहा आन्दोलन मोटे तौर पर चार स्तरों पर विभाजित रहा :- (1) उत्तरी तेलंगाना के उपरोक्त चार जिले, जहाँ किसान संघर्ष संगठित किये जाने थे और छापामार ज़ोन बना दिया जाना था, (2) तेलंगाना और रायलसीमा के अन्य जिले, जहाँ सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष शुरू हो चुके थे, (3) भिन्न सामाजिक-आर्थिक स्थितियों वाले दक्षिणी तटीय जिले, जहाँ कानूनी अवसरों से लाभ उठाने के प्रयास किये जा रहे थे, खेतिहर मजदूरों एवं गरीबों के बीच प्रचारात्मक कार्यक्रम तथा कार्य किये जा रहे थे और (4) दीर्घकालिक जन युद्ध की रणनीति के हिस्से के बतौर कस्बों व शहरों में काम।

पीडब्ल्यू का गठन

सीपीआई (एमएल) पीपुल्स वार का गठन 22 अप्रैल 1980 को **एपीएससी** और **टीएनएससी** (आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडू की प्रादेशिक कमेटियों) के विलय के बाद हुआ। बाद में मई में महाराष्ट्र का सच्चे क्रान्तिकारी शक्तियों का ग्रुप सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू से आ जुड़ा। कर्नाटक में पार्टी के उस वक्त कुछेक सदस्य ही थे। प्रदेशों में पार्टी की स्थिति उस वक्त ऐसी थी:-

कामरेड अप्पू को दिसम्बर 1969 में **टीएनएससी** का **सचिव** चुना गया (8वीं काँग्रेस में भी उन्हें **सीसी** सदस्य चुना गया था)। पर सचिव बनने के एक साल बाद उनकी शहादत और अन्य अनेक नेताओं की गिरतारी तथा शहादत के बाद तमिलनाडू का आन्दोलन विकसित नहीं हो सका। दिसम्बर 1969 में **हुए अपने प्रदेश सम्मेलन** से लेकर 1980 तक **टीएनएससी** ने अपनी कोई समीक्षा ही नहीं की थी।

1970 के दशक के दौरान तमिलनाडू की पार्टी चार ग्रुपों में बँट गयी। एक धड़ा विनोद मिश्र ग्रूप में शामिल हुआ, तो दूसरा **एसएनएस** की लाइन पर चल पड़ा। तीसरे ग्रूप ने सीएम की लाइन ली और 1979 तक आते-आते इसने

कुछ हद तक जन संगठनों की जरूरत महसूस करना शुरू किया। फिर भी यह ग्रूप मुख्यत: संकीर्णतावादी अवस्थिति लिये हुआ था। 1977 में इस ग्रूप में एक और फूट पड़ी। एक धड़ा कामरेड कन्नामणी के साथ गया और दूसरा कामरेड मणिक्कम के नेतृत्व में गोलबन्द हुआ। अप्रैल 1980 में इस दूसरे ग्रूप की **एपीएससी** के साथ एकता हुई और **पीपुल्स वार पार्टी** अस्तित्व में आयी। तमिलनाडू में **पीपुल्स वार पार्टी** के गठन के समय कोई ऐसा नेतृत्व नहीं रहा जिसे पार्टी की कतारों और जनता का विश्वास हासिल हो।

महाराष्ट्र में नक्सलबाड़ी और श्रीकाकुलम के संघर्षों की ओर आकर्षित हुए कुछ कामरेडों के एक साथ जुट जाने पर 1972 में पार्टी इकाइयाँ उभरीं। महाराष्ट्र के तत्कालीन नेतृत्व ने जब **एसएनएस**-सीपीआर विलय में हिस्सेदारी की, तो 1975 में कुछ कामरेड इसके विरोध में टूट कर अलग हो गये। इन्होंने अलग इकाई बना ली। इस इकाई ने करीमगनगर ओर आदिलाबाद के संघर्षों से प्रभावित होकर **एपीएससी** के साथ सम्पर्क स्थापित किये। इस इकाई ने **पीडब्ल्यू** में शामिल होकर जून 1980 में **बम्बई नगर सम्मेलन** आयोजित किया, जिसने पार्टी के बुनियादी दस्तावेज पारित किये।

1980 में **पीडब्ल्यू** के गठन के बाद यह आन्दोलन समूचे तेलंगाना, उत्तरी आन्ध्र और दण्डकारण्य तक फैल गया।

आधार इलाके के हिस्से के रूप में छापामार ज़ोनों के निर्माण का परिप्रेक्ष्य

पीडब्ल्यू ने अपना ग्रामीण कार्य ठोस योजना और परिप्रेक्ष्य के साथ शुरू किया। वह यह कि आन्दोलन के सुदृढ़ीकरण और सशस्त्र संघर्ष के तीखा होते जाने के दौरान उत्तरी तेलंगाना के पिछड़े क्षेत्र को छापामार ज़ोन के रूप में रूपान्तरित किया जाय और इससे लगे हुए दण्डकारण्य क्षेत्र को इस परिप्रेक्ष्य के साथ पिछवाड़े (रियर) के रूप में विकसित किया जाय कि इसे आधार इलाके के रूप में रूपान्तरित किया जायेगा। इस परिप्रेक्ष्य को बढ़ते दमन के मद्देनजर 1980 में ही **एपीएससी** के कामरेड केएस के नेतृत्व में तैयार किया था।

दरअसल राजकीय दमन सितम्बर 1978 में किसान संघर्षों की शुरुआत के चन्द महीनों के भीतर शुरू हुआ। बड़े पैमाने पर पुलिस के शिविर स्थापित किये जाने लगे। जगित्याल तथा सिरिसिल्ला तालुकों (तहसीलों) को अक्टूबर में

''अशान्त क्षेत्र'' घोषित किया गया। दुश्मन के सशस्त्र बलों के भारी आक्रमण की सम्भावना को देखते हुए पार्टी ने सबसे पहले जगित्याल परिप्रेक्ष्य तैयार किया। बाद में 'करीमनगर और आदिलाबाद के किसान संघर्षों को नयी मंजिल तक ले जाने के लिए तैयार हों!' शीर्षक से 'छापामार ज़ोन परिप्रेक्ष्य' तैयार किया। इसी के अनुरूप उत्तरी तेलंगाना, आन्ध्र प्रदेश के पूर्वी घाट और सीमावर्ती महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश (अब छत्तीसगढ़) के जंगलों में सशस्त्र किसान दस्ते भेजे गये। योजना के अनुसार दण्डकारण्य में धीरे-धीरे व्यापक जन आधार तैयार किया गया। फरवरी 1987 में आन्ध्र प्रदेश के आदिलाबाद तथा पूर्वी डिविजन (जिसमें विशाखापटनम तथा पूर्वी गोदावरी जिले आते हैं) और महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश तथा उड़ीसा के जंगल क्षेत्रों को समेटने वाली अलग जंगल कमेटी बना ली गयी।

एक परिप्रेक्ष्य तथा ठोस योजना होने, ऊपरी कमेटी की ओर से लगातार साथियों को समझाते रहने और सीधे नेतृत्व दिये जाने के कारण ही हम एक व्यापक, लगे हुए इलाके में सशस्त्र संघर्ष का विस्तार कर पाये। इसी प्रक्रिया में हम **उत्तरी तेलंगाना (एनटी)**, **दण्डकारण्य (डीके)** तथा **आन्ध्र-उड़ीसा सीमा (एओबी)** क्षेत्रों में तीन **छापामार ज़ोन** विकसित कर पाये। इसका अन्य क्षेत्रों तथा प्रदेशों के संघर्षों पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा। सशस्त्र संघर्ष **दक्षिणी तेलंगाना क्षेत्र, रायलसीमा** और बाद में **आन्ध्र प्रदेश के दक्षिणी तटीय जिलों के कुछ पिछड़े हिस्सों** तक भी विस्तार कर पाया। 2001 में **9वीं** काँग्रेस से पहले आन्ध्र प्रदेश के **दक्षिणी तेलंगाना** और **नल्ला मल्ला** क्षेत्रों में भी छापामार ज़ोन अस्तित्व में आ सके। **डीके, एनटी, एओबी** को **आधार इलाकों** के रूप में विकसित करने के मकसद से **छापामार ज़ोन** बनाने की योजना ने देश में **पीडब्ल्यू** के नेतृत्व में चल रहे क्रान्तिकारी आन्दोलन में निर्णायक मोड़ ला दिया।

पार्टी के दो प्रमुख आन्तरिक संकट

पीडब्ल्यू के गठन के चार वर्षों बाद **सीसी** में संकट उभर आया। दरअसल अप्रैल 1980 में **सीसी** के गठन के एक साल के भीतर 9वीं काँग्रेस रखने का फैसला हुआ था। लेकिन तमिलनाडू के **सीसी** सदस्य वीर स्वामी

(वीएस)-मणिक्कम ने अपने प्रदेश की राजनीतिक-सांगठनिक समीक्षा (पीओआर) लिखने और तामिलनाडू प्रदेश सम्मेलन आयोजित करने में जान-बूझकर देर की। इस वजह से काँग्रेस को स्थगित करना पड़ा था। फिर मई 1984 की सीसी बैठक में अन्तरराष्ट्रीय स्थितियों में बदलावों के कारण **राजनीतिक प्रस्ताव** पारित करने के बाद वर्ष 1985 के पहले तीन महीनों में काँग्रेस आयोजित करने का फैसला किया गया। लेकिन 1985 की शुरुआत में सत्यमूर्ति (एसएम) और वीएस के नेतृत्व में अवसरवादी गुट ने पार्टी में संकट पैदा किया, जिसके कारण काँग्रेस नहीं हो सकी। इस तरह भूतपूर्व **पीडब्ल्यू** की पहली **सीसी**, जो अप्रैल 1980 में बनी और 1985 की शुरुआत तक काम करती रही, 1985-87 के संकटों के दौरान पंगु हो गयी। अप्रैल 1987 में इसने खुद को भंग कर दिया।

इस संकट के मुख्य कारण को आन्दोलन के सामने आयी समस्याओं का निराकरण करने के सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए। सशस्त्र संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए कौन-सी कार्यनीति अपनायी जाय, इसको लेकर कई सवाल आन्दोलन के सामने खड़े थे। पार्टी नेतृत्व इन सवालों का सही समाधान खोजने की स्थिति में नहीं रहा। इन सवालों का गम्भीरता से जवाब खोजने के बजाय केन्द्रीय नेतृत्व ने साजिशाना तरीके अपनाकर पार्टी में संकट पैदा किया। आन्दोलन को आगे बढ़ाने में आड़े आ रही अपनी कमजोरियों को ढँकने और अपनी विफलताओं के लिए आत्मालोचना करने के लिए खुद को तैयार न कर पाने के कारण सीसी में एसएम-वीएस गुट ने 'वाम' शब्दाडम्बर में ढंकी वैकल्पिक लाइन रखी, जो वास्तव में सारतः दक्षिणपन्थी लाइन ही थी। लेकिन इस विसर्जनवादी-अवसरवादी गुट द्वारा अपनाये गये पार्टी-विरोधी तौर-तरीकों के कारण उसकी गलत लाइन के खिलाफ रेशा-रेशा दो दिशाओं का संघर्ष करना सम्भव नहीं हो पाया। इस पार्टी-विरोधी गुट को पराजित करने के बाद ही कहीं आन्दोलन आगे बढ़ पाया। अब पार्टी लाइन के इर्द-गिर्द पार्टी और ज्यादा दृढ़ता से कमोबेश एकीकृत हो गयी। इसके बाद तीन सालों का ऐसा समय बीता जब आन्ध्र प्रदेश, तामिलनाडू, कर्नाटक और महाराष्ट्र की चार प्रदेश इकाइयाँ किसी केन्द्रीय नेतृत्व के बिना कार्य करती रहीं। तब अगस्त 1990 के केन्द्रीय

प्लेनम में नयी सीसी चुन ली गयी। इसे सीओसी कहा गया।

मगर समुचित कार्यनीति अपनाकर आन्दोलन आगे बढ़ाने में अब कोई भूमिका न निभा पा रहे अवसरवादी केएस-बन्दैया गुट के कारण 1991 के मध्य में पार्टी में एक और आन्तरिक संकट सतह पर आया। अपनी असफलताओं को ढंकने के लिए और कुछ राजनीतिक मुद्दों पर अपने मनोगत आकलनों तथा दक्षिणपन्थी-अवसरवादी कार्यनीति थोपने के लिए केएस-बन्दैया गुट ने अराजक एवं अति-जनवादी तौर-तरीकों को अपनाते हुए पार्टी को तोड़ने तथा विसर्जित करने के प्रयास किये। मुट्ठीभर अवसरवादी तत्वों को छोड़कर पूरी पार्टी इस गुट के खिलाफ उसूली संघर्ष छेड़ने में एकताबद्ध होकर खड़ी हुई और इसके विघटनकारी मंसूबों पर पानी फेर सकी। यह संकट लगभग एक साल तक खिंचा और आखिर जून 1992 में इस गुट को पार्टी से निष्कासित किया गया।

दूसरे अन्दरूनी पार्टी संकट और इससे लड़ने के लिए अपनाये गये तौर-तरीकों ने एक बड़े शिक्षा अभियान का काम किया और पार्टी की कार्यशैली में सुधार लाया, **सीसी** में सामूहिक नेतृत्व तथा टीम कार्यप्रणाली को विकसित किया और सभी पार्टी कमेटियों को जनवादी केन्द्रीयता के आधार पर मजबूत किया। इसने पूरी पार्टी के विचारधारात्मक-राजनीतिक स्तर को उन्नत किया और नये कार्यभार प्रस्तुत किये।

सार-संक्षेप में कहें, तो पार्टी की कतारों ने 1985-87 और 1991-92 के अन्दरूनी पार्टी संकटों के दौरान तत्कालीन **सीसी सचिवों** के नेतृत्व में काम कर रहे अवसरवादी गुटों के खिलाफ संघर्ष किया, उनके विघटनकारी मंसूबों को परास्त किया और दृढ़ता से एकता कायम रखी। पार्टी दोनों मौकों पर दुश्मन के भारी दमन अभियानों का मुकाबला करने और पहले से ज्यादा मजबूत होकर उभरने में कामयाब हुई। यह इसलिए सम्भव हुआ कि पार्टी कार्यकर्ताओं को राजनीतिक शिक्षा दी गयी, कमजोरियों व भटकावों के विरुद्ध पार्टी में शुद्धिकरण अभियान चलाये गये और पार्टी कतारों का क्रान्तिकारी प्रतिबद्धता का स्तर ऊँचा तथा सशस्त्र संघर्ष के प्रति जड़ाव पक्का रहा।

मिसाल के तौर पर, 1981 में नौकरशाही के विरुद्ध और 1984 में ''छः बुराइयों'' - अवसरवादी गठजोड़, नौकरशाही, कानूनवाद, तकनीकी

सावधानियों के उल्लंघन, आर्थिक फिजूलखर्ची और महिला साथियों के साथ दुर्व्यवहार जैसे विजातीय वर्ग रुझानों के विरुद्ध सुसंगत संघर्ष किया गया। आन्ध्र प्रदेश में ''छः बुराइयों'' के विरुद्ध शुद्धिकरण अभियान 1984 से लेकर 1987 तक चलाया गय। इस शुद्धिकरण अभियान के दौरान सभी पार्टी कमेटी बैठकों में आलोचना-आत्मालोचना चलायी गयी, पार्टी इतिहास पर इससे सीखने के लिए तथा ''छः बुराइयों'' को सुधारने के लिए सभी पार्टी कार्यकर्ताओं के बीच राजनीतिक कक्षाएँ तथ चर्चाएँ आयोजित की गयीं। पार्टी इतिहास से सम्बन्धित ज्यादातर दस्तावेजों को पाँच खण्डों में प्रकाशित किया गया और आन्ध्र प्रदेश तथा दण्डकारण्य में पूरी पार्टी को शिक्षा दी गयी।

पार्टी की राजनीतिक-सामरिक लाइन का विकास

भाकपा(माले) की राजनीतिक-सामरिक लाइन भाकपा तथा माकपा की संशोधानवादी लाइन के खिलाफ सतत, समझौताविहीन राजनीतिक वाद-विवाद और उस ठोस वर्ग संघर्ष का परिणाम रहा जिसने नक्सलबाड़ी-श्रीकाकुलम और अन्य सशस्त्र जनउभारों का रूप लिया। नयी संशोधानवादी लाइन पुरानी संशोधनवादी लाइन से पूर्ण विच्छेद करते हुए उभरी। यही लाइन देश के विभिन्न भागों में दीर्घकालिक जन युद्ध के विकास के लम्बे दौर में समृद्ध होती गयी है। यह वर्ग संघर्ष, सशस्त्र संघर्ष और संशोधनवाद के विभिन्न रूप-रंगों तथा क्रान्तिकारी आन्दोलन के दक्षिणपन्थी 'वाम' रुझानों के साथ राजनीतिक वाद-विवाद और उतार-चढ़ाव, ज्वार-भाटा, आरोह-अवरोह के अनुभवों का संश्लेषण है। यह क्रान्ति के तीन जादुई हथियारों सर्वहारा पार्टी, जन सेना और क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे को गढ़ने से जुड़ी हुई है।

तमाम सम्मेलनों, प्लेनमों, विशेष बैठकों, कमेटी बैठकों में लगातार अनुभवों का सार-संकलन किया गया, आन्दोलन के सकारात्मक पहलुओं को आत्मसात व नकारात्मक पहलुओं को रद्द किया गया और समय-समय पर उचित सबक व कार्यभार निकाले गये। इनमें 1977 का पहला **तेलंगाना क्षेत्रीय सम्मेलन**, 1980 का 12वाँ **आन्ध्र प्रदेश का प्रादेशिक सम्मेलन**, 1987 का 13वाँ **प्रदेश सम्मेलन**, भूतपूर्व **पीडब्ल्यू** का 1995 का **अखिल**

भारतीय विशेष सम्मेलन और 1983, 1987, 1993 तथा 1997 के **पीयू** के केन्द्रीय सम्मेलन महत्वपूर्ण रहे।

लम्बे क्रान्तिकारी व्यवहार के दौरान जब हम किसी नयी स्थिति से रूबरू होते, तो नयी कार्यनीति सूत्रबद्ध करते रहे। हमने समय-दर-समय अपने व्यवहार का सार-संकलन किया। पार्टी सम्मेलन तथा काँग्रेस में हमने अपनी बुनियादी दस्तावेजों को समृद्ध किया। 8वीं काँग्रेस के बाद हमने कई महत्वपूर्ण दस्तावेज तैयार किये। वे हैं - **वर्तमान परिस्थिति और हमारी कार्यनीति (एपीएएससी का अगस्त 1977 का प्रस्ताव), आत्मालोचात्मक समीक्षा (एससीआर -1980), हमारी कार्यनीतिक लाइन (ओटीएल-1980), जगित्याल परिप्रेक्ष्य - 1978, छापामार ज़ोन (जीजेड) परिप्रेक्ष्य - 1980, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीसी) पर केन्द्रीय कमेटी का प्रस्ताव - 1983, राजनीतिक प्रस्ताव - 1980, 1984, 1992, अखिल भारतीय विशेष सम्मेलन (एआईएससी) के दस्तावेज - 1995, सीसी के दो दिशाओं के संघर्ष के दस्तावेज - 1985** और समय-दर-समय **सीसी** तथा **प्रादेशिक कमेटियों** द्वारा जारी तमाम **परिपत्र (सर्कुलर)**। इसके अलावा शुद्धिकरण एवं शिक्षा अभियान के हिस्से के रूप में **पार्टी दस्तावेजों के पाँच खण्ड** और **पीडब्ल्यू** तथा अन्य पत्रिकाओं में राजनीतिक वाद-विवाद तथा अन्य महत्वपूर्ण हमलों से सम्बन्धित अनेक दस्तावेज प्रकाशित हुए। इन सभी के जरिये हमने अपनी पार्टी लाइन विकसित की और पार्टी के विचारधारात्मक-राजनीतिक-सांगठनिक-सामरिक स्तर को उन्नत करने के प्रयास किये।

राजनीतिक लाइन की सारवस्तु को कामरेड सीएम के **आठ दस्तावेजों** द्वारा विकसित किया गया और 8वीं काँग्रेस द्वारा पारित किया गया। फिर भी कार्यनीति के सन्दर्भ में गम्भीर भटकाव रहे। यह भटकाव जन संघर्ष एवं जन संगठनों के विभिन्न रूपों को खारिज करने तथा वर्ग दुश्मनों के सफाये को संघर्ष का एकमात्र रूप मानकर चलने, ट्रेड यूनियनों के बहिष्कार, शहरी छापामार युद्ध पर अतिरिक्त जोर, पूँजीवादी शिक्षा संस्थानों पर हमला करने की वाम दुस्साहसवादी कार्यनीति, पूँजीवादी अदालतों के बहिष्कार आदि से सम्बन्धित रहे। 8वीं काँग्रेस में वर्ग दुश्मनों के सफाये की कार्यनीति को लाइन का दर्जा दिये जाने के कारण

आन्दोलन को काफी नुकसान पहुँचा और कालान्तर में इससे क्रान्तिकारी शक्तियाँ अलगाव में पड़ीं। पार्टी की राजनीतिक लाइन की गलतियों को 1974 के *एसीआर*में सुधारा गया और सामयिक पराजय के बाद आन्ध्र प्रदेश में यह नयी समझदारी व्यवहार में परिलक्षित हुई। क्रान्तिकारी जन दिशा के आधार पर बड़े पैमाने पर अनेक जन संगठनों को खड़ा किया गया और वर्ग संघर्ष शुरू किये गये।

1970 के दशक के दौरान कानू सन्याल, टीएन-डीवी-सीपीआर, एसएनएस की **पीसीसी** आदि कुछ भूतपूर्व माले ग्रूपों ने 8वीं काँग्रेस को ''वाम दुस्साहसवादी'', ''वाम संकीर्णतावादी'' और ''जन विरोधी'' तक करार देते हुए 8वीं काँग्रेस की लाइन की आलोचना की। वे जन दिशा के बारे में और इस बारे में कि कैसे कामरेड सीएम जन दिशा से भटक गये थे, अन्तहीन बातें करते रहे। पर सार रूप में ये सारे ग्रूप असल में संशोधनवादी या दक्षिणपन्थी-अवसरवादी लाइन की वकालत करते रहे। उन्होंने जन दिशा को दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन के परस्पर विरोध में खड़ा किया। दूसरे छोर पर **दूसरी (सेकेण्ड) सी0सी0**, विनोद मिश्र के **लिबरेशन** जैसे कुछ माले संगठन रहे जो कामरेड सीएम की गलतियों की आलोचना करने से कतई इन्कार करते रहे, उनके ''राजनीतिक प्राधिकार'' पर जड़सूत्रवादी तरीके से अड़े रहे, जन संगठन तथा जन संघर्ष के किसी भी रूप को खारिज करते रहे और संघर्ष के ''एकमात्र रूप'' के रूप में वर्ग दुश्मन के सफाये की हिमायत करते रहे। (1980 के दशक की शुरुआत में इनमें से **लिबरेशन** ग्रुप ने पलटी खाकर दूसरा छोर पकड़ लिया और यह संशोधनवादियों के खेमे से जुड़ गया।)

विभिन्न माले ग्रूपों की इन गलत अवस्थितियों के विरुद्ध **एपीएससी** और बाद में **सीपीआई(एमएल) पीडब्ल्यू** ने कामरेड सीएम तथा 8वीं काँग्रेस की क्रान्तिकारी लाइन की हिफ़ाज़त की, खामियों को खुलकर चिह्नित किया और साहस के साथ इनको सुधारना शुरू किया। इस मार्क्सवादी-लेनिनवाद-द्वन्द्ववादी पद्धति और दृष्टिकोण के ही कारण लाइन को आगे समृद्ध किया जा सका और व्यवहार में परखा भी जा सका।

पीडब्ल्यू और **पीयू** ने भारतीय समाज के अधिक ठोस विश्लेषण के काम को हाथ में लिया और भारत में क्रान्तिकारी युद्ध की खास चारित्रिक विशेषताओं तथा चीन की क्रान्ति-पूर्व स्थितियों के साथ समानताओं व भिन्नताओं का अध्ययन किया। राजनीतिक तथा सामरिक रणनीति एवं कार्यनीति के विकास में इसी का योगदान रहा। देश की विशिष्टताओं और खास विशेषताओं, जैसे जाति प्रश्न, राष्ट्रीयता प्रश्न, आदिवासी प्रश्न, महिला प्रश्न तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों के प्रश्न का ठोस अध्ययन किया। इससे इन तमाम सामाजिक तबकों को नयी जनवादी क्रान्ति के लिए लामबन्द करने की विशिष्ट कार्यनीति तैयार करने में मदद मिली।

दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन का ठोस अमल

हमारे देश की विशिष्ट स्थितियों में दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन को लागू करने की प्रक्रिया के रूप में एपीएससी ने करीमनगर व आदिलाबाद में फल-फूल रहे किसान संघर्षों को ऊँचे स्तर तक ले जाने का फैसला करते हुए आह्वान किया -''करीमनगर और आदिलाबाद के किसान संघर्षों को नये स्तर तक पहुँचाने के लिए तैयार हो जाओ।'' चार जिलों करीमनगर, आदिलाबाद, वारंगल और खम्मम (उत्तरी तेलंगाना) में छापामार ज़ोन तैयार करने की योजना पर अमल करने के प्रयासों के हिस्से के रूप में 1980 में आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश (अब छत्तीसगढ़) की सीमाओं पर स्थित रणनीतिक क्षेत्र दण्डकारण्य में सात हथियारबन्द किसान छापामार दस्ते भेजे गये। हमने 1980-84 के दौरान हमने उत्तरी तेलंगाना तथा दण्डकारण्य में जुझारू तरीके से किसान संघर्ष चलाये और जनता के विभिन्न तबकों के अनेक मुद्दों पर राजनीतिक आन्दोलन खड़े किये।

1985 में केन्द्र और राज्य सरकारों ने हम पर अघोषित युद्ध छेड़ दिया। इस अघोषित युद्ध का डटकर मुकाबले करने के लिए हमने मई 1985 में प्रतिरक्षात्मक युद्ध की कार्यनीति सूत्रबद्ध की। 1985-87 हमारे लिए काला दौर रहा। इस दौरान हमने अनेक नुकसान झेले और दुश्मन का पलड़ा भारी पड़ा। 1987-88 में हमने जन संगठनों का पुनर्निर्माण किया तथा जन आधार को एवं दस्तों को सुदृढ़ किया। हमने मैदानों व जंगलों में नये दस्ते भी बनाये। इस तरह

हम विभिन्न रूपों में हथियारों से हमला करते हुए दुश्मन का सामना करने में सफल रहे। 1988 के मध्य से शुरू करते हुए जन प्रतिरोध और सशस्त्र प्रतिरोध आन्दोलन का पलड़ा 1989 के अन्त तक आते-आते भारी पड़ा। इस प्रकार सरकार के ''अघोषित युद्ध'' को शिकस्त दी गयी। इस दौर में सघन सशस्त्र संघर्ष हुआ। सरकारी बलों और उनके दलालों पर जवाबी हमला करना हमारा मुख्य कार्यक्रम रहा।

दुश्मन की 1985-87 में चली पहली बड़ी आक्रमणकारी मुहिम को हम 1987 में तब तोड़ पाये जब हमने पूर्वी डिविजन में दारागड्डा एम्बुश और आदिलाबाद में आल्लमपल्ली एम्बुश संगठित करते हुए 18 पुलिस वालों को मार गिराया तथा कई रायफिलें छीन लीं। इन जाँबाज एम्बुशों ने दुश्मन का मनोबल तोड़ दिया और कुछ देर के लिए उसकी बढ़त रोक दी, जबकि जनता का मनोबल ऊँचा हुआ। इसने 1988 से जुझारू जन संघर्षों तथा जनता की सशस्त्र कार्रवाइयों की लहर शुरू करने में मदद पहुँचायी।

1990 में शासक वर्गों के अन्तरविरोधों का लाभ उठाते हुए हमने कार्यनीति बदली। अब हमने जन आधार को सुदृढ़ किया, व्यापक जन संघर्ष खड़े किये, सशस्त्र टुकड़ियों को विस्तारित एवं सुदृढ़ किया तथा आन्दोलन का विस्तार किया।

1990 के अन्त से हमने प्रतिरक्षात्मक युद्ध की कार्यनीति के सहारे केन्द्र सरकार द्वारा तीन प्रदेशों (आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र) में छेड़े गये दूसरे अघोषित युद्ध से मोर्चा लिया। इस दौर में हमें आन्ध्र में नेतृत्व के बीच से कइयों को खोना पड़ा। 1985 से लेकर आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और उड़ीसा की पुलिस मशीनरी आधुनिकृत और पहले से कहीं ज्यादा फासीवादी हो गयी। दूसरी ओर जनता का सशस्त्र प्रतिरोध भी बढ़ता गया।

1990 के अन्त से एक बार फिर पूरे आन्ध्र प्रदेश में दुश्मन की सशस्त्र आक्रमणकारी मुहिम तेज कर दी गयी। मई 1992 में **सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू** और जन संगठनों पर प्रतिबन्ध लगाया गया। फर्जी मुठभेड़ों की एकाएक बाढ़-सी आ गयी। पूरे उत्तरी व दक्षिणी तेलंगाना तथा पूर्वी डिविजन में श्वेत आतंक छाया रहा। पार्टी ने प्रतिरक्षात्मक युद्ध के जरिये इस क्रूर आक्रमण

का बहादुरी से मुकाबला किया, एकाएक मौका देखकर तथा सोचे-समझे तरीके से एम्बुश तथा छापे संगठित किये और कुछ स्थानों पर जन मिलिशिया की टुकड़ियों को पुलिस तथा राजकीय सम्पत्ति के खिलाफ सशस्त्र कार्रवाइयों के लिए लामबन्द किया। अब पुलिस तथा अद्धसैनिक बलों के साथ सशस्त्र झड़पें ज्यादा तीव्र हुईं और स्थानीय दुश्मनों के साथ झड़पें गौण हो गयीं।

1990 के दशक में **पीडब्ल्यू** के छापामार दस्तों की योजनाबद्ध जवाबी कार्रवाइयों तथा प्रतिरोध के दौरान कई पुलिस थानों तथा शिबिरों पर छापे मारे गये और हथियार छीने गये। 1996 में करकागुडेम तथा सिरपुर(यू) जहाँ एक साथ पुलिस थानों तथा एपी स्पेशल पुलिस व सीआरपीएफ के शिविरों हैं वहाँ सिलसिलेवार छापों के बाद सरकार को भीतरी इलाकों से अनेक शिविर तथा पुलिस थाने हटाने पड़े। एम्बुशों ने पुलिस तथा अर्द्ध-सैनिक बलों को भीतरी इलाकों में प्रवेश करने से रुकवा दिया। दूसरे प्रदेशों से लाये गये विशेष बलों, जैसे पंजाब कमाण्डों बल को एम्बुशों से करारे झटके लगे। दिसम्बर 1994 का लेंकलागड्डा एम्बुश इसका एक उदाहरण है। छापामारों द्वारा बहादुराना सशस्त्र प्रतिरोध से जन आन्दोलनों को नयी गति मिली और 1995 से इनमें वृद्धि हुई। विभिन्न मुद्दों पर वर्ग संघर्ष तथा भूमि कब्जाने के संघर्ष आम विशेषता हो गयी। उत्तरी तेलंगाना के अनेक गाँवों में जनता की जनवादी सत्ता के निकायों के साथ-साथ तमाम जन कमेटियाँ उभर आयीं। पुलिस के खिलाफ हमारी कुछेक जीतों के बाद उत्पीड़ित जनता की पहलकदमी खुल गयी।

माओ द्वारा प्रस्तुत छापामार युद्ध के उसूलों को अपना आधार बनाते हुए हमने स्थानीय स्थितियों के अनुरूप विभिन्न रूप ईजाद कर लिये। भारत में क्रान्तिकारी युद्ध की खास विशेषता यह है कि कम्युनिस्ट पार्टी के पास यहाँ चीन जैसी कोई जन सेना नहीं है। यहाँ छोटे-छोटे छापामार दस्तों से शुरू करते हुए जन सेना खड़ी करनी होगी और क्रमशः उच्चतर सैनिक संरचनाओं की ओर विस्तार करना होगा। अलग से जन सेना के न होने के कारण सशस्त्र छापामार दस्तों को लम्बे समय तक सांगठनिक व सैनिक कार्यभारों तथा जिम्मेदारियों का निर्वाह करना होगा। इसी तरह मजबूत जन सेना की गैर-मौजूदगी और केन्द्रीकृत भारतीय राज्य की श्रेष्ठता के कारण भारत में

आधार इलाकों की स्थापना में अपेक्षाकृत ज्यादा समय लगेगा और जयादा समय तक छापामार ज़ोन अस्तित्व में रहेंगे।

'छापामार ज़ोन – हमारा परिप्रेक्ष्य' **और** 'रणनीति-कार्यनीति' **दस्तावेजों में हमने देश के विभिन्न क्षेत्रों की स्थितियों का विश्लेषण किया, रणनीतिक इलाकों की तीन प्रकार की श्रेणियाँ बनायीं और तीनों प्रकार के इलाकों के लिए कार्यनीति सूत्रबद्ध की। इस ठोस विश्लेषण से छापामार ज़ोन व आधार इलाकों के बारे में हमारी समझदारी समृद्ध हुई और विभिन्न प्रदेश कमेटियों को आधार इलाके स्थापित करने के मकसद से छापामार ज़ोन विकसित करने के लिए परिप्रेक्ष्य इलाकों का चयन करने में मदद मिली।**

इस दौर में हमारा आन्दोलन उत्तरी तेलंगाना और दण्डकारण्य के छापामार ज़ोनों के अलावा पूरे आन्ध्र प्रदेश में भी बढ़ता गया। विभिन्न इलाकों में सामाजिक, भौगोलिक स्थितियों और वर्ग संघर्ष की तीव्रता तथा जनता की चेतना की स्थिति के सन्दर्भ में भिन्नताएँ हैं। दुश्मन ने भी सभी इलाकों में सशस्त्र तरीकों से आन्दोलन को कुचलने के इरादे से दमन बढ़ाने के प्रयास तेज कर दिये हैं। अत: 1980 के दशक के अन्त तक सशस्त्र दस्ते केवल उत्तरी तेलंगाना तथा दण्डकारण्य में ही नहीं, बल्कि आन्ध्र प्रदेश के अन्य इलाकों में भी गठित किये गये।

पार्टी के नेतृत्व में चलाये गये दीर्घकालिक जन युद्ध के दौरान हम संघर्ष के रूपों तथा संगठन के रूपों के सम्बन्ध में समृद्ध अनुभव हासिल कर पाये। छापामार युद्ध, जन सेना, जनता की राजनीतिक सत्ता, छापामार ज़ोन, छापामार अड्डों व आधार इलाकों के बारे में हमारी व्यावहारिक एवं अवधारणागत समझदारी भी समृद्ध हुई है। छापामार ज़ोनों में छापामार सेना और छापामार युद्ध ही संगठन और संघर्ष के मुख्य रूप होंगे। जैसे-जैसे जन सेना सुदृढ़ होती जायेगी, वैसे-वैसे छापामार युद्ध भी तीव्र होता जायेगा।

हमने सशस्त्र संघर्ष के अपने समृद्ध अनुभवों को संश्लेषित किया और यह निष्कर्ष निकाला कि छापामार ज़ोनों में मुख्यत: हमारे और दुश्मन के बीच राजनीतिक सत्ता के लिए संघर्ष होगा। दुश्मन की राजनीतिक सत्ता

का नाश किया जायेगा और जनता की सत्ता का निर्माण किया जायेगा। लेकिन विनाश मुख्य होगा और निर्माण गौण। जब छापामार बल तगड़ी लड़ाई लड़ेंगे और दुश्मन के बलों पर हावी होंगे तब जनता की सत्ता स्थापित हो जायेगी। दूसरी ओर जब दुश्मन के तीखे हमलों की सूरत में छापामार बल पीछे हटने को मजबूर होंगे तब दुश्मन अपनी सत्ता फिर से कायम कर लेगा। इस तरह छापामार ज़ोनों में सत्ता के लिए तीखा संघर्ष चलेगा। दूसरे शब्दों में कहें, तो छापामार ज़ोनों में राजनीतिक सत्ता छापामारों और दुश्मन की सशस्त्र ताकत तथा जन समर्थन के हिसाब से अक्सर एक से दूसरे के हाथ में चली जायेगी। अर्थात् यहाँ राजनीतिक सत्ता लम्बे समय तक दोलायमान अवस्था में रहेगी जब तक कि छापामार बल इसे दुश्मन के कब्जे से पूरी तरह मुक्त नहीं कर लेते और आधार इलाके में रूपान्तरित नहीं करते।

इस तरह इलाका विशेष में एक साथ दोहरी सत्ता नहीं चलती है। सत्ता या तो छापामार बलों की होती है या फिर दुश्मन वर्गों की। सत्ता में जल्दी–जल्दी एक का स्थान दूसरा तो ले सकता है। मगर एक ही स्थान पर एक ही समय दोनों वर्गों के हाथ में सत्ता नहीं रह पाती है। इसीलिए छापामार युद्ध के विकास के दौर में जब छापामार ज़ोनों में जनता जन राजनीतिक सत्ता को सुदृढ़ करने के लिए व्यापक पैमाने पर मैदानी जंग में आगे बढ़ रही हो, उस दौरान हमें उन रणनीतिक इलाकों में आधार इलाकों के अभिन्न अंग के रूप में छापामार अड्डे विकसित करना शुरू करना होगा जो दुश्मन के प्रतिकूल हों और जहाँ जन आधार तथा भौगोलिक संरचना हमारे अनुकूल हों।

मैदानी इलाकों में छापामार युद्ध और ज्यादा दीर्घकालिक होगा। लेकिन मैदानों के उन इलाकों में जहाँ भौगोलिक संरचना अनुकूल होगी, वहाँ थोड़े समय के लिए मौसमों का लाभ उठाकर बिल्कुल अस्थाई छापामार अड्डे विकसित किये जा सकते हैं और थोड़े समय के लिए राजनीतिक सत्ता कायम की जा सकती है। उसी समय कृषि क्रान्ति के कार्यक्रम को लागू करते हुए जनता को जागृत कर और बड़े पैमाने पर भर्ती बढ़ाते हुए जन छापामार सेना को विस्तारित कर छापामार युद्ध विकसित किया जा सकता है। मैदानों में सत्ता की स्थापना

ज्यादा अस्थिर होगी और लहरों के रूप में होगी। कुछ गाँवों में जहाँ जनता की चेतना विकसित होगी, वहाँ राजनीतिक सत्ता के निकाय तैयार हो सकते हैं। लेकिन इस बात को ध्यान में रखना होगा कि इन राजनीतिक निकायों को विकसित करना और जन सत्ता को स्थापित करना तब तक सम्भव नहीं होगा जब तक उस स्तर तक पहुँचा नहीं जाता जहाँ जन छापामार सेना दुश्मन को बहुत बड़ी शिकस्त दे रही हो।

छापामार ज़ोन के आसपास के कस्बों में मजदूरों, छात्रों, युवाओं एवं बुद्धिजीवियों को संगठित करने का काम एक महत्वपूर्ण कार्यभार के रूप में किया गया और शहरी इलाकों में काम की गुप्त पद्धतियाँ विकसित की गयीं। वहाँ के कामों को देहाती क्षेत्रों के जन युद्ध का हित साधने की दिशा में और देहात के कामों के साथ करीबी तालमेल करते हुए चलाया गया। कस्बे आपूर्ति केन्द्रों के रूप में कार्यकर्ता, तकनीकी कर्मियों, स्वास्थ्य कर्मियों आदि के भर्ती केन्द्रों के रूप में और गाँवों में चल रहे सामन्तवाद-विरोधी, साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन के समर्थन में एकजुटता के केन्द्रों के रूप में काम आते रहे हैं। कुछ हद तक साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन विकसित किये गये। क्रान्तिकारी आन्दोलन के खिलाफ दुश्मन के कुत्सा प्रचार का प्रतिकार करने के लिए व्यापक अभियान चलाये गये।

मगर शहरी इलाकों के काम में कई खामियाँ रहीं और कई नेतृत्वकारी कार्यकर्ता खो दिये गये जिसके कारण गम्भीर नुकसान हुआ। नतीजतन आन्ध्र प्रदेश का शहरी आन्दोलन जो 1990 के दशक के मध्य तक अपेक्षाकृत मजबूत रहा, कालान्तर में कमजोर हुआ।

एआईएससी और पार्टी लाइन विकसित करने में इसकी भूमिका

अखिल भारतीय विशेष सम्मेलन (1995) ने 8वीं काँग्रेस के बाद देश में तथा अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर हुए महत्वपूर्ण राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक परिवर्तनों और पिछले 25 वर्षों से क्रान्तिकारी आन्दोलन तथा पार्टी द्वारा हासिल अनुभवों का रेशा-रेशा विश्लेषण करने पर संशोधित **'पार्टी कार्यक्रम'** तथा **'पार्टी संविधान'**, **'रणनीति-कार्यनीति'** पर दस्तावेज, **'छापामार ज़ोन - हमारा परिप्रेक्ष्य'** दस्तावेज, नया **'राजनीकि प्रस्ताव (वर्तमान राजनीति परिस्थिति**

और हमारे कार्यभार)' पारित किये। सम्मेलन ने अतीत के बारे में 1980 की **'आत्मालोचनात्मक रिपोर्ट'** को भी बुनियादी दस्तावेज मानते हुए अनुमोदित किया। सम्मेलन ने राजनीतिक-सांगठनिक समीक्षाओं के मार्फत डेढ़ दशकों के व्यवहार की भी समीक्षा की और केन्द्रीय **'राजनीतिक-सांगठनिक रिपोर्ट'** जारी कर दी। **एआईएससी** ने पार्टी की बुनियादी लाइन की हिमायत करने की इस प्रक्रिया के जरिये और साथ ही मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की रोशनी में विभिन्न क्षेत्रों में हुए विकास तथा पार्टी के लम्बे व्यवहार का विश्लेषण करते हुए पार्टी की राजनीतिक, सांगठनिक, सामरिक लाइन को समृद्ध किया। आठवीं काँग्रेस के बाद सम्मेलन की यह सफलता पहली अहम् उपलब्धि रही।

8वीं काँग्रेस के बाद ढ़ाई दशकों के लम्बे अन्तराल में अनेक टेढ़े-मेढ़े रास्तों तथा विजय-पराजय की भारी कठिनाइयों का सामना करते हुए और 1978 के बाद पुनरुभार के दौर से गुजरते हुए पार्टी के पुनर्निर्माण, सुदृढ़ीकरण व विकास की प्रक्रिया में सभी स्तरों पर एक नेतृत्व उभर आया था। एआईएससी की प्रक्रिया में यह नेतृत्व जिला, प्रदेश तथा केन्द्रीय स्तर के सम्मेलनों में चुना गया। 8वीं काँग्रेस के बाद पहली बार एक अभियान के रूप में जनवादी तरीके से नेतृत्व का चुनाव हुआ था। यह सम्मेलन की दूसरी उपलब्धि रही।

एआईएससी ने पार्टी के लिए महत्वपूर्ण कार्यभार सूत्रबद्ध किये जिनमें से सबसे महत्वपूर्ण था मुख्यत: जन सेना तथा आधार इलाके तैयार करने के इरादे से विजय की ओर आगे बढ़ने के लिए तीन जादुई हथियारों को मजबूत करना। **सीपीआई(एमएल) पीडब्ल्यू** के इतिहास में **एआईएससी** को एक महत्वपूर्ण निर्णायक मोड़ माना जाता रहेगा।

पूर्ववर्ती पीयू का गठन और विकास

नवम्बर 1978 में जेल से बाहर निकले मुट्ठीभर कामरेडों ने **सीपीआई (एमएल) पार्टी यूनिटी** का गठन किया। जेल में रहते हुए उन्होंने व्यक्तिगत और सामूहिक तौर पर अतीत की समीक्षा के बारे में कुछ बुनियादी मुद्दों पर एक-से विचार तैयार कर लिये थे। सीएम के नेतृत्व वाली **सीपीआई (एमएल)** में ये सभी सक्रिय रह चुके थे। बाद में इनमें से कुछ महादेव मुखर्जी के नेतृत्व वाली

दूसरी सीसी में शामिल हुए थे। जेल से रिहा होने के बाद उन्होंने अतीत की समीक्षा के आधार पर किसी क्रान्तिकारी ग्रूप से एकता करने के प्रयास किये। लेकिन ये प्रयास सफल नहीं हो पाये। उन्होंने महसूस किया कि अतीत की समीक्षा के आधार पर क्रान्तिकारी संघर्ष विकसित किये बिना एकता के प्रयास हकीकत में उतारे नहीं जा सकेंगे। इस एहसास के साथ उन्होंने संगठन बनाया और सम्मेलन आयोजित किया। नवम्बर 1978 में आयोजित हुए सम्मेलन में तीन दस्तावेज पारित हुए - **सीपीआई(एमएल) की ऐतिहासिक सार्थकता के बारे में, एकता के बारे में, सफ़ाये की लाइन बारे में।** समानधर्मी क्रान्तिकारियों के साथ एकता के प्रयास जारी रहे। इस सम्मेलन में संघर्षों का नेतृत्व करने के लिए संगठन बनाने का फैसला हुआ। तदनुरूप नेतृत्वकारी कमेटी गठित की गयी। क्रान्तिकारी किसान आन्दोलन खड़ा करने के लिए दक्षिण-मध्य बिहार का क्षेत्र चुना गया। यह चुनाव रणनीतिक उद्देश्यों से किया गया था। बिहार के अन्य हिस्सों और पश्चिम बंगाल के नादिया तथा मुर्शीदाबाद इलाकों में भी काम शुरू किया गया।

जब 1978 में **पीयू** का गठन हुआ तब तीन प्रस्ताव पारित किये गये। पहला सीपीआई (एमएल) के बारे में था। इस प्रस्ताव में 1970 की पार्टी काँग्रेस में पारित पार्टी की विचारधारात्मक-राजनीतिक लाइन, पार्टी गठन और पार्टी कार्यक्रम की बुनियादी लाइन को सही माना गया। प्रस्ताव में कामरेड चारू मजुमदार की संशोधनवाद तथा नव-संशोधनवाद से लड़ाई लड़ने, भारतीय क्रान्ति तथा सशस्त्र संघर्ष का विचारधारात्मक-राजनीतिक आधार स्थपित करने और नक्सलबाड़ी संघर्ष का नेतृत्व करने तथा पार्टी का गठन करने में बेमिसाल भूमिका को सराहा गया। प्रस्ताव मे यह भी कहा गया कि बुनियादी तौर पर पार्टी कार्यक्रम सही था, पर इसमें कुछ खामियाँ रहीं। खामियों में युग तथा विश्व युद्ध के सवाल पर गलत आकलन, तत्कालीन अन्तरराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्थितियों का बढ़-चढ़कर आकलन, त्वरित विजय की अवधारणा, जन संगठनों में, मसलन ट्रेड यूनियन गतिविधियों, छात्र संघों, कर्मचारी यूनियनों, अन्य जन संगठनों एवं जन आन्दोलनों में हिस्सेदारी को खारिज करने आदि को माना गया। दूसरा प्रस्ताव सफाये की लाइन के बारे में रहा। इस प्रस्ताव ने 1970 की काँग्रेस द्वारा पारित सफाये की लाइन को खारिज किया। सफाये की लाइन को क्रान्ति के समक्ष

सभी समस्याओं का निराकरण करने वाली एक आम कार्यनीतिक लाइन समझा गया था। इस लाइन को खारिज करते हुए प्रस्ताव ने वर्ग दुश्मनों के सफाये को संघर्षों के अनेक रूपों में एक माना। तीसरा प्रस्ताव एकता लाइन के विषय में रहा। प्रस्ताव में माले आन्दोलन की तत्कालीन स्थितियों का आकलन किया गया और माले आन्दोलन में मोटे तौर पर तीन रुझान होने की बात कही गयी। पहला दक्षिणपन्थी विपथगामी-विजर्सनवादी लाइन का रहा जो अतीत की वामपन्थी गलतियों को सुधारने के नाम पर नक्सलबाड़ी और भाकपा(माले) की क्रान्तिकारी सारवस्तु को ही त्याग देता था। इस पूरी तरह संशोधनवादी लाइन को मानने वाले एसएनएस, कानू सन्याल, असीम चटर्जी आदि रहे। दूसरा रुझान अतीत की किसी गलती को न पहचानते हुए उन्हीं त्रुटिपूर्ण नीतियों पर व्यवहार जारी रखने का था। इससे **दूसरी सीसी** के नेतृत्व वाली 'वाम' अवसरवादी लाइन विकसित हुई। तीसरा रुझान उनका था जो अतीत की गलतियों को स्वीकार करते थे और इन गलतियों को सुधारते हुए तथा संजीदगी के साथ व्यवहार जारी रखते हुए लाइन का विकास करने की पहल कर रहा था।

एकता के विषय में दस्तावेज में इस तीसरे रुझान को कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी खेमे के रूप में पहचानते हुए इसी के साथ एकता करने की हिमायत की गयी। इसमें **एपीएससी, सीओसी, एमसीसी** आदि रहे। इसने यह भी चिह्नित किया कि दक्षिण व वाम अवसरवाद तथा जड़सूत्रवाद से लड़ते हुए आज आन्दोलन के सामने सबसे गम्भीर व मुख्य खतरा दक्षिणपन्थी अवसरवाद व विसर्जनवाद का है। इस बात ने **एपीएससी** द्वारा तैयार किये **'एससीआर'** तथा **'कार्यनीतिक लाइन'** के दस्तावेजों को समृद्ध करने में मदद की। 1979 के अन्त में **एपीएससी** और **पीयू** के दस्तावेजों को संयुक्त दस्तावेज बनाते वक्त इन पहलुओं को जोड़ने में भी मदद की।

पीयू की पहली एकता एक छोटे संगठन बिहार के **एआईसीसीसीआर** का घटक रह चुके **कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी संगठन (सीकेएस)** के साथ हुई। **भाकपा(माले)** की बिहार प्रादेशिक कमेटी के तत्कालीन सचिव **एसएनएस** के साथ मतभेदों के कारण **सीकेएस** उसमें शामिल नहीं हुआ था। **सीकेएस** में फूट पड़ी और औरंगाबाद तथा पलामू जिलों की सीमा पर काम करने वाले हिस्से का

सीपीआई (एमएल) पीयू के साथ विलय हुआ। इससे 1980 में **सीपीआई (एमएल) यूओ**, अर्थात् **यूनिटी ऑर्गनाइजेशन** बना।

यूओ और कामरेड शर्मा तथा अप्पालासूरी के नेतृत्व वाले पूर्ववर्ती **सीओसी, सीपीआई (एमएल)** के हिस्से का विलय हुआ। इससे फिर **पीयू** बनी। इन दोनों संगठनों के बीच मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा तथा भारतीय क्रान्ति के अनेक बुनियादी मुद्दों, मसलन रणनीति तथा कार्यनीति और घरेलू तथा अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थिति पर व्यापक सहमति रही, हालांकि चीन राज्य के चरित्र जैसे कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर कुछ मतभेद भी रहे। **सीओसी** की मान्यता यह रही कि चीन अभी समाजवादी ही है, जबकि **पीयू** ने 1980 में ही चीन को संशोधनवादी घोषित किया था। यह तय हुआ कि चीन के सवाल पर संयुक्त संगठन मिलकर अध्ययन करेगा और उसके बाद अन्तिम निर्णय लेगा। दोनों ही संगठन अतीत की लाइन में कुछ प्रमुख खामियों के प्रति रचनात्मक रूप से आत्मालोचनात्मक रुख रहे।

पीयू के साथ कुछ अन्य छोटे संगठनों का भी विलय हुआ। 1990 में पंजाब की **सीटी, सीपीआई(एमएल)** का **तालमेल केन्द्र (कोऑर्डिनेशन सेण्टर)** नाम का घड़ा, जिसे **संग्राम ग्रुप** भी कहा जाता था पीयू के साथ एक हो गया। 1988 में पश्चिम बंगाल के छोटे संगठन **सीसीआरआई (एमएल)** का बिहार धड़ा **पीयू** के साथ एक हो गया।

1987 में पीयू ने अपना केन्द्रीय सम्मेलन आयोजित किया। इसके दो पहलू सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहे। एक यह कि इसने तत्कालीन महासचिव द्वारा प्रस्तुत दक्षिणपन्थी-विपथगामी लाइन के खिलाफ संघर्ष किया। दूसरा यह कि सम्मेलन ने नया पार्टी कार्यक्रम व संविधान पारित किया। 1970 के कार्यक्रम की प्रमुख विशेषताओं को बरकरार रखते हुए इस कार्यक्रम में कुछ महत्वपूर्ण नये पहलू शामिल किये गये थे। 1987 के कार्यक्रम की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार रहीं - (1) भारतीय समाज का चरित्र अर्द्ध-औपनिवेशिक, अर्द्ध-सामन्ती है, (2) भारत के बड़े पूँजीपति वर्ग का दलाल चरित्र है, (3) बड़े दलाल पूँजीपति वर्ग और बड़े जमींदार वर्ग भारत के शासक वर्ग हैं, (4) क्रान्ति के निशाने सामाजिक-साम्राज्यवाद

सहित साम्राज्यवाद, दलाल बड़े पूँजीपति वर्ग और बड़े जमींदार वर्ग हैं, (5) मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्सेतुंग विचारधारा हमारा विचारधारात्मक आधार है, (6) दीर्घकालिक जन युद्ध, छापामार ज़ोन, आधाार इलाके और जन सेना को खड़ा करते हुए सत्ता पर कब्जा करना होगा। 1987 के सम्मेलन में पारित इस कार्यक्रम में कुछ नये पहलू भी शामिल किये गये थे। इनमें थे - (1) अर्द्ध-औपनिवेशिक तथा अर्द्ध-सामन्ती देश के समग्र ढाँचे के भीतर कृषि क्षेत्र में कुछ परिवर्तन हुए हैं, खासकर पुरानी जमींदारी व्यवस्था के उन्मूलन और ''हरित क्रान्ति'' के जरिये। अर्द्ध-सामन्ती ढाँचे के भीतर पूँजीवादी तत्वों का समावेश हुआ है। इसके फलस्वरूप पंजाब जैसे कुछ इलाकों में क्षेत्रीय पैमाने पर एक किस्म का पूँजीवाद विकसित हुआ है, जो विकृत, ठहरावग्रस्त और सामन्ती अवशेषों को साथ लिये हुए है। इस परिवर्तन के कारण देहाती इलाकों में कुछ नये वर्ग उभरे हैं। (2) दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्ग देश का शासक वर्ग है और देश के विकास तथा क्रान्ति के रास्ते का एक अवरोध। यह साम्राज्यवाद का मुख्य वाहक है। यह क्रान्ति के निशानों में से एक है। इसीलिए इसने दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्गों बनाम व्यापक जनता के बीच के अन्तरविरोध को भारतीय समाज का एक प्रमुख/बुनियादी अन्तरविरोध माना। भारत के इस दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्ग को साम्राज्यवाद का अधीनस्थ माना गया। यह माना गया कि यह वर्ग एक निश्चित पहचान रखता है, कि यह महज साम्राज्यवाद की यान्त्रिक कठपुतली नहीं है और इसे अपनी वृद्धि की आकांक्षा के लिए मूलतः निर्भरता के ही दायरे में ''साम्राज्यवाद तथा सामाजिक-साम्राज्यवाद के साथ सौदेबाजी एवं दाँवपेंच करने की क्षमता की तुलनात्मक स्वतन्त्रता'' हासिल है। दलाल नौकरशाही पूँजीपति वर्गों की सापेक्षिक स्वतन्त्रता के सवाल पर अतिरिक्त जोर दिये जाने के कारण कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी खेमे में पी.यू. की भारतीय राज्य के चरित्र के बारे में समझ को लेकर काफी आशंकाएँ पैदा हुईं। पीयू के दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्गों के इस चरित्र-निर्धारण से यह प्रभाव पड़ा मानो उसे ''स्वतन्त्र'' वर्ग माना जा रहा हो। यही पीयू, पीडब्ल्यू और एमसीसी के बीच प्रमुख राजनीतिक मतभेद

का मुद्दा बन गया। इसलिए पीयू ने यह तय किया कि एकता के सवाल पर वह इस मुद्दे पर लचीला रुख अपनायेगी। इसीलिए 1998 में पीडब्ल्यू के साथ एकता के समय पीयू ने इस अन्तरविरोध को हटाने का प्रस्ताव मान लिया। (3) पीयू ने यह माना कि ''बहुसंख्यक छोटे व मझोले पूँजीपति वर्ग राष्ट्रीय पूँजीपति हैं, हालांकि ये साम्राज्यवाद तथा दलाल पूँजीपति वर्गों पर कुछ हद तक निर्भर हैं।'' (4) इसने यह माना कि भारतीय मजदूर वर्ग हमारी क्रान्ति में चीन से ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा, क्योंकि भारतीय मजदूर वर्ग का विकास तथा आकार काफी बड़ा है आदि-आदि।

पीयू ने बिहार के मगध क्षेत्र में 1980 के मध्य तक आते-आते सार्थक सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष खड़ा किया, जिसके बाद यह कोयल-कैमूर (पलामू जिले) की ओर विस्तार करने लगा। आन्दोलन का सीधा प्रभाव मगधा क्षेत्र के चार जिलों में करीब हजार गाँवों तक फैला। इनमें से आधे गाँवों में जन संगठन **मजदूर किसान संग्राम समिति (एमकेएसएस)** की गाँव कमेटियाँ रहीं। 200 से ज्यादा गाँवों में **ग्राम रक्षा दल** रहे। उस वक्त पूर्णकालिक व अंशकालिक कार्यकर्ताओं को लेकर चार या पाँच सशस्त्र छापामार दस्ते काम करते रहे। इन सशस्त्र दस्तों के सहयोग से भूमि सेना जैसी जमींदारों की कुख्यात निजी सेना को सशस्त्र जन प्रतिरोध के मार्फत परास्त कर दिया गया। दस्ते कभी-कभार पुलिस बलों के हथियार छीना करते रहे। इससे पूरे मगधा क्षेत्र में ऐतिहासिक जन उभार आया। जमींदारों से करीब 50 हथियार छीने गये।

1983 की शुरुआत में ही **एमकेएसएस** के **प्रदेश सम्मेलन** पर पुलिस के सशस्त्र हमले से, जिसमें दर्जनों कामरेड घायल हुए थे, राज्य ने अपने दमन अभियान का सूत्रपात किया। सम्मेलन से ठीक पहले **एमकेएसएस** के एक कार्यकर्ता की पुलिस द्वारा गोली मारकर हत्या प्रदेश की पहली फर्ज़ी मुठभेड़ रही। 1985 में बिहार सरकार ने आन्दोलन को दबाने के लिए **स्पेशल टास्क फोर्स (एसटीएफ)** तैनात कर दी। लेकिन इससे जनता की ओर से और भारी प्रतिरोधा खड़ा हो गया। चारों ओर से लाखों लोग **एसटीएफ** की ज्यादतियों के खिलाफ गोलबन्द हुए। क्षेत्र में चारों ओर आयोजित रैलियों व जन सभाओं में

हजारों लोगों ने शिरकत की। अन्य **माले** पार्टियों को साथ लेकर आयोजित ऐसी ही एक जनसभा में 50,000 लोग शामिल हुए। इसके बाद **एसटीएफ** अस्थायी तौर पर पीछे हटने को बाध्य हुई। फिर भी 19 अप्रैल 1986 को प्रदेश ने जलियाँवाला बाग काण्ड कराया। अरवल में एक जन सभा पर नृशंस हमला किया गया, जिसमें 23 लोग हताहत हुए और 70 अन्य घायल हुए। विभिन्न क्रान्तिकारी व जनवादी संगठनों के संयुक्त मोर्चे के आह्वान पर इस नरसंहार के खिलाफ हजारों लोगों ने प्रदेश विधान सभा भवन की ओर कूच कर दिया। पूरे बिहार में 40 हजार लोग जगह-जगह हिरासत में लिये गये। इस रैली के कुछ ही दिन पहले **एमकेएसएस** को राज्य सरकार ने प्रतिबन्धित कर दिया।

1985 तक गाँव स्तर पर **एमकेएसएस** के 2000 कार्यकर्ता और 20 हजार सदस्य रहे। संघर्ष के आम रूपों में जमींदारों का सामाजिक बहिष्कार, फसल कब्जा करना, हड़ताल आयोजित करना, जन पंचायतें लगाना, गुण्डों का स्फाया करना आदि रहे। निजी सेनाओं के खात्मे और राजकीय दमन के बाद 1990 के दशक में जन आन्दोलन ने राज्य-विरोधाी स्वरूप ग्रहण कर लिया। केके क्षेत्र में जन सेना व आधार इलाके खड़े करने के परिप्रेक्ष्य के साथ मगध क्षेत्र में छापामार ज़ोन तैयार करने तथा जनता की सत्ता के निकाय कायम करने का नारा देने के लिए स्थितियाँ अभी परिपक्व हो चुकी थीं। लेकिन 1987 के **केन्द्रीय सम्मेलन** ने केवल इतना ही सार-संकलन किया कि ''दक्षिणी मध्य बिहार सीमा क्षेत्र में विकसित हो रहे किसान संघर्ष की ओर पार्टी को ध्यान देना चाहिए।'' संघर्ष की जरूरतों के अनुरूप समय पर नारे न दे पाने तथा ठोस योजनाएँ न बना पाने के कारण आन्दोलन में ठहराव आ गया और फिर गिरावट आयी।

पार्टी ने 1978 मे पलामू जिले के रणनीतिक महत्व को समझते हुए वहाँ प्रवेश किया। 1985 में कोयल-कैमूर क्षेत्र के पलामू जिले के केवल तीन इलाकों तथा रोहतास जिले के केवल एक ब्लाक में पार्टी की गतिविधियाँ चलती रहीं। अभी केवल दो दस्ते ही काम करते रहे। फिर 1988-90 में कोयल-कैमूर क्षेत्र में जन उभार आया। तभी कुछ और दस्ते तैयार कर लिये गये। लेकिन इस केके क्षेत्र में छापामार ज़ोन बनाने की कोई ठोस योजना न होने और नेतृत्व के एक

बड़े हिस्से के गिरफ्तार हो जाने के कारण 1991 के बाद आन्दोलन ठहराव के दौर में चला गया।

पीयू के इतिहास में दो बड़े अन्दरूनी पार्टी संघर्ष हुए। एक 1987 में और दूसरा 1997 में। 1987 में आयी वैकल्पिक लाइन ने **भाकपा (माले)** की बुनियादी लाइन को ही अपना निशाना बनाया था। इस लाइन के हिमायतियों ने मनोगत तरीके से यह आकलन किया कि अर्द्ध-सामन्ती रिश्तों में मूलतः परिवर्तन हो चुका है क्योंकि कृषि में पूँजीवादी सम्बन्धा विकसित हुए हैं और अब कृषि क्रान्ति कालातीत हो चुकी है। लेकिन इतना करने के बाद उन्होंने कोई ठोस कार्यनीति प्रस्तुत नहीं की, हालांकि इसकी तार्किक परिणति सशस्त्र आम बगावत ही होती। परन्तु 1987 में **पीयू** के **केन्द्रीय सम्मेलन** में इस लाइन को परास्त किया गया और नयी जनवादी क्रान्ति की धुरी के रूप में कृषि क्रान्ति के साथ ही दीर्घकालिक जन युद्ध की लाइन दोबारा स्थापित हो गयी। इस तरह पार्टी पहले से ऊँचे धारातल पर एकीकृत हो गयी।

1993 में एक **सीओसी** सदस्य ने पार्टी लाइन पर कुछ महत्वपूर्ण सवाल उठाये। ये सवाल 1993 के सम्मेलन रखे गये थे, इन पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया गया। 1996 के **बिहार प्रदेश सम्मेलन** ने 1985-86 के दौरान मगधा क्षेत्र में सघर्ष आगे बढ़ाने में किल रहने का मूल्यांकन किया। लेकिन इसे भी **सीओसी** ने खारिज किया। 1997 के **केन्द्रीय सम्मेलन** में जब **पीडब्ल्यू** के साथ एकता प्रक्रिया के तौर पर 18 वर्षों की समीक्षा की जाने लगी तो उपरोक्त सारे सवालों की परिणति एक सम्पूर्ण संघर्ष के रूप में हुई। बिहार प्रदेश सम्मेलन के बहुमत द्वारा अनुमोदित किये जाने के बाद भी उनका समालोचनात्मक दस्तावेज केन्द्रीय सम्मेलन में पारित नहीं हो पाया। लेकिन इस दस्तावेज में की गयी कुछ मूल्यवान तथा सही आलोचनाओं को केन्द्रीय राजनीतिक एवं सांगठनिक रिपोर्ट **(पीओआर)** में शामिल कर लिया गया। 1997 में दो दिशाओं के इस संघर्ष ने **पीयू** की राजनीतिक लाइन को समृद्ध किया। इसका **पीयू** और **पीडब्ल्यू** की एकता प्रक्रिया पर भी सकारात्मक असर पड़ा।

पूर्ववर्ती **पीयू** में विजातीय वर्ग रुझानों का असर आन्दोलन के विकास के दौर में प्रमुख निर्णायक मोड़ों पर नेतृत्व के फैसलों तथा कार्यनीति में और संघर्ष

के घिसे-पिटे रूपों तथा संगठन के पुराने स्वरूप को ही जारी रखे जाने में दिखता है। खास तौर पर मगधा-कोयल कैमूर क्षेत्र में छापामार ज़ोन तैयार करने का नारा न देने और कोई कार्यभार तय करने के बाद उसे पूरा करने की ठोस योजना न बनाने में मनोगतवाद और दक्षिणपन्थी रुझान दिखायी दिया। उसी तरह 1980 के मध्य में पश्चिम बंगाल के नादिया में किसानों को बड़े पैमाने पर गोलबन्द करने के बाद संघर्ष को उच्चतर अवस्था की ओर विकसित न करना भी पार्टी नेतृत्व में मनोगतवाद और दक्षिणपन्थी रुझान को ही दर्शाता रहा। कुछ महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दों में भी, जैसे **सीपीसी** और **लिबरेशन** ग्रूप को संशोधनवादी घोषित करने में अनपेक्षित विलम्ब से नेतृत्व का उदारतावाद दिखायी दिया है। कुछ क्षेत्रों में कानूनवाद, गैर-पेशेवराना रवैया और अति जनवाद पर रोक न लगाये जाने के रूप में उदारतावाद दिखायी देता है। इन्हीं विजातीय वर्ग रुझानों के कारण कुछ इलाकों में आन्दोलन धीमा पड़ा और ठहराव का शिकार हो गया।

यही नहीं, 1997 के **केन्द्रीय सम्मेलन** में मनोगतवाद, नौकरशाही तथा पितृसत्ता की मजबूत रही। मगर केवल स्वतः स्फूर्तता, उदारतावाद और कानूनवाद को ही चिह्नित किया गया। इन गलत रुझानों को सुधारने का कोई गम्भीर प्रयास नहीं किया गया। इससे आन्दोलन पर नकारात्मक असर पड़ा।

पीडब्ल्यू और पीयू में एकता

एकदम शुरुआत से ही **सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू** और **सीपीआई (एमएल) पीयू** ने एकता के सवाल को सर्वाधिक महत्व दिया। दोनों ने सच्चे **कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों** की एकता पर जोर दिया, चाहे वे **भाकपा (माले)**के अंग रहे हों या न रहे हों।

1970 के दशक में **पीडब्ल्यू** ने सच्ची **माले** पार्टियों के बीच एकता को सबसे फौरी कार्यभार समझा जिसपर अमल करने के लिए 1980 में एक मानदण्ड तय किया गया जिसके अनुसार **माले** शक्तियों में से चुनावों में हिस्सा लेने वालों और चुनावों का बहिष्कार करने वालों के बीच बंटवारा किया गया।

इन दोनों श्रेणियों के अनुरूप १९७९-८० में भकपा(माले) की एपीएससी और सीपीआई (एमएल) पीयू के बीच एकता वार्ता हुई। अतीत

के मूल्यांकन और कार्यनीतिक लाइन पर उनके बीच समान समझ बनी। मगर पार्टी की, सीसी गठित करने की तथा काँग्रेस आयोजित करने की अवधारणाओं पर मतभेदों के कारण एकता कायम नहीं हो पायी। पीयू की यह राय रही कि विभिन्न सीपीआई (एमएल) संगठन जनवादी केन्द्रीयता पर अमल करने के बावजूद ग्रूप ही हैं, कि वे मूल भाकपा(माले) के अंग रहे हैं, इसलिए उन्हें पार्टी नहीं माना जाना चाहिए। पीयू की मान्यता यह रही कि भाकपा (माले) के प्रमुख क्रान्तिकारी ग्रूपों के एकीकरण के बाद ही पार्टी गठित की जा सकती है और फिर सीसी गठित की जा सकती है।

पीयू ने यह प्रस्ताव रखा कि पहले विलय हो जाय और फिर बाद में एकीकृत पार्टी में जनवादी केन्द्रीयता के आधार पर इस सवाल पर बहस हो। **पीडब्ल्यू** को यह लगा कि **एकीकृत पार्टी और सीसी के गठन** की अवधारणा एक महत्वपूर्ण सवाल है। इसीलिए **सीसी गठन** और **काँग्रेस बुलाने** के सवालों पर ही यदि गम्भीर मतभेद बने रहेंगे, तो दो पार्टियों के वास्तविक एकीकरण में कोई मदद नहीं मिल पायेगी। 1970 के दशक में **सीपीआई (एमएल)** के ग्रूपों के बीच चले एकता के तमाम प्रयासों और फिर तुरन्त फूट हो जाने के सिलसिले को देखते हुए **पीडब्ल्यू** ने यह आग्रह किया कि इस सवाल पर मतभेदों को विलय से पहले ही सुलझाया जाय और तभी जनवादी केन्द्रीयता वास्तव में लागू की जा सकेगी। 1980 और 1990 के दशकों के अनुभव पूर्ववर्ती **पीडब्ल्यू** की इस राय को पुष्ट कर रहे थे। मूल **भाकपा(माले)** के ज्यादातर धड़े या तो संशोधनवादी पार्टियों के रूप मे पतित हो गये या विलुप्त हो गये थे।

एपीएससी, टीएनएससी और **पीयू** के बीच एकता प्रक्रिया के दौरान जब **पीयू** के साथ मतभेद उभरे, तब अप्रैल 1980 में **एपीएससी** और **टीएनएससी** ने आगे चलकर **पीडब्ल्यू** बना लिया था। उधर **पीयू** पार्टी का पंजाब के कामरेड शर्मा वाले **सीओसी** ग्रूप के साथ भी विलय हो गया।

पीडब्ल्यू और **एमसीसी** पहली बार 1981 में मिले थे। तब से दोनों पार्टियो के बीच रिश्ते सौहार्दपूर्ण रहें। कालान्तर में उनकी यह राय बनी कि उनकी एकता के लिए आधार है। इसी के साथ कामरेड केएस और केसी ने एकता वार्ता शुरू की थी। अत: स्वाभाविक है कि दोनों पार्टियों ने आपस में वार्ता

जारी रखने को पहली प्राथमिकता दी।

1992-93 में चार पार्टियों **पीडब्ल्यू, एमसीसी, पीयू** और **एमआरपीडब्ल्यू** ने जब संयुक्त गतिविधियाँ शुरू कीं, तो चारों के बीच कुछ सकारात्मक समझदारी बनी। उस वक्त पूर्ववर्ती **पीडब्ल्यू** और **एमसीसी** के बीच एकता वार्ता चल रही थी। लेकिन विलय के लिए चली वार्ता 1995 में विफल हुई। इसके बाद **पीडब्ल्यू** और **पीयू** के प्रतिनिधि-मण्डलों के बीच घरेलू तथा अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति पर विचारों का आदान-प्रदान करते हुए दोनों पार्टियों की यह राय बनी कि दोनों के बीच कई राजनीतिक पहलुओं पर समान समझदारी है। इसीलिए 1996 में दोनों के बीच एकता वार्ता शुरू की गयीं।

इसी के अनुरूप दोनों पार्टियों के बीच बातचीत होने लगी। **पीडब्ल्यू** ने आग्रह किया कि एकता की पूर्वशर्त के तौर पर दोनों पार्टियों को अतीत का रेशा-रेशा मूल्यांकन करना चाहिए और अपनी-अपनी **राजनीतिक-सांगठनिक समीक्षा (पीओआर)** तैयार कर लेना चाहिए। यही काम **पीडब्ल्यू** ने 1995 में अपने **विशेष सम्मेलन** में पूरा किया, जबकि **पीयू** ने 1997 में अपने **विशेष सम्मेलन** में अपना पीओआर पारित कर लिया। सभी बुनियादी दस्तावेजों पर एकता हासिल करने के बाद उसूली विचारधारात्मक-राजनीतिक-सांगठनिक आधार पर इन्होंने विलय कर लिया। इस प्रकार इन्होंने एकीकृत केन्द्र **सीपीआई (एमएल) पीडब्ल्यू की केन्द्रीय कमेटी (अस्थाई)** का गठन करके अपनी एकता प्रक्रिया को अंजाम तक पहुँचाया। इसी प्रक्रिया में **९वीं काँग्रेस** की तैयारी शुरू हो गयी। इस विलय ने **भाकपा (माले)** की क्रान्तिकारी विरासत को आगे बढ़ाने वाले ज्यादातर सच्चे क्रान्तिकारियों को एक करते हुए देश के क्रान्तिकारी खेमे में उत्साह पैदा किया।

फिर भी नयी पार्टी की यह समझ रही है कि सच्चे कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के एकीकरण की प्रक्रिया अभी पूरी तरह नहीं हुई है, क्योंकि **सी.पी.आई. (एम.एल.)** की धारा की एक बड़ी शक्ति **एम.सी.सी.** अभी बाहर रह गयी है। इसीलिए हमें इसके साथ बातचीत चलाने का प्रयास करना होगा। साथ ही साथ, हमें मुश्तरका दुश्मन के खिलाफ संयुक्त कार्यों को जारी रखते हुए मार्क्सवादी-लेनिनवादी खेमे के विभिन्न संगठनों के साथ विचारधारात्मक तथा

राजनीतिक मामलों पर बातचीत चलानी होगी। विभिन्न क्रान्तिकारी संगठनों के सम्बन्धा में हमारे दृष्टिकोण के अनुसार हमने यह तय किया कि उनके साथ राजनीतिक चर्चा करते हुए उनकी लाइन की कमजोरियों का खुलासा करेंगे।

क्रान्ति के तीन जादुई हथियारों को तैयार करना

पार्टी की राजनीतिक-सामरिक लाइन सही है या नहीं, इसे क्रान्ति के तीन जादुई हथियारों के निर्माण में हुई प्रगति को और देश में जन युद्ध के समग्र विकास को देखकर तय किया जा सकता है। पूर्ववर्ती एकीकृत पीडब्ल्यू के नेतृत्व में क्रान्तिकारी आन्दोलन देश के कई सारे इलाकों तक फैला और भारतीय राजनीतिक परिदृश्य पर एक चुनौतिपूर्ण ताकत बन कर उभरा।

सच्ची सर्वहारा पार्टी का निर्माण

जुलाई 1972 में कामरेड सीएम की शहादत के बाद कोई केन्द्रीय नेतृत्व, यानी **सीसी** अस्तित्व में नहीं रही। ज्यादातर पार्टी कमेटियों का ऊपर से नीचे तक तहस-नहस हो चुका था। प्रत्येक प्रदेश में पार्टी कई-कई खण्डों में विभाजित हो चेकी थी। क्रान्तिकारी ऊान अब शिथिल पड़ गया था और तमाम किसान संघर्षों की सामयिक पराजय हो चुकी थी। सबसे ज्यादा कठिन इस दौर में हमारा सर्वोच्च कार्यभार इस स्थिति से उबरना और एकदम शून्य से शुरू करते हुए पार्टी का पुनर्निर्माण करना रहा।

हमने अपने शहीदों की बेमिसाल कुर्बानियों से हासिल अतीत के सबक लेकर अपनी पार्टी को पुनर्गठित करना शुरू किया। इस पुनर्गठन और पुनःउभार ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सर्वथा नयी पीढ़ी को पार्टी से ला जोड़ा। इस पुनःउभार ने उन ज्यादातर पुराने कार्यकर्ताओं को भी फिर से ढालकर तैयार किया, जिन्होंने आन्दोलन का निर्माण करने तथा नेतृत्व करने में बड़ी अहम् भूमिका अदा की। संघर्ष के इस दौर में कुछ ही सालों में सैकड़ों पार्टी सदस्य प्रशिक्षित हुए। पार्टी कमेटियाँ गठित की गयीं। मुख्यतः प्रदेश व जिला स्तरों पर नया नेतृत्व उभर आया।

अपने जन्म से, यानी 1969 से ही हमारी पार्टी एक गुप्त पार्टी रही है। हमारी पार्टी दशकों से चले आ रहे दुर्द्धर्ष सशस्त्र संघर्ष से गुजरते हुए विकसित हुई है, जिस दौरान इसने दमन अभियानों के रूप में निर्मम युद्ध का सामना किया।

कई महान नेताओं सहित हजारों शहीदों ने क्रान्ति की चमकती लाल राह को दिखाते हुए बलिदान दिया है। गुप्त कार्यप्रणाली में पर्याप्त अनुभव हासिल

करने के बावजूद हमने अनेक गलतियाँ की हैं और कई बड़े नुकसान उठाय हैं। खुले व कानूनी कार्यों का गुप्त व गैर-कानूनी कार्यों के साथ कारगर तरीके से तालमेल करने में अभी समस्याएँ मौजूद हैं।

पूर्ववर्ती पीडब्ल्यू दो बड़े अन्दरूनी पार्टी संकटों के दौरान तप चुकी है और बेहतर आन्तरिक एकता कायम कर चुकी है। आत्मालोचना, आलोचना की पद्धति हमारी पार्टी जीवन का अभिन्न अंग बन चुकी है। हमने एआईएससी के समय और फिर 9वीं काँग्रेस के दौरान गलत रुझानों की पहचान की है। खास तौर पर 9वीं काँग्रेस के बाद शुद्धिकरण अभियानों के जरिये विभिन्न निम्न-पूँजीवादी प्रवृत्तियों को निकाल बाहर करने के गम्भीर प्रयास किये गये हैं।

एआईएससी के फ़ल समापन और नये प्रदेशों में विस्तारित पार्टी का सुदृढ़ीकरण होने पर पूर्ववर्ती **पीडब्ल्यू** को अखिल भारतीय दर्जा मिला। **पीडब्ल्यू** और **पीयू** के विलय ने एकीकृत पार्टी की हैसियत और बढ़ा दी। ऐसे समय पर **एमसीसी** के साथ वार्ताओं की किलता निश्चित तौर पर नकारात्मक घटना रही। क्रान्तिकारी शक्तियों के लिए यह निराशा की बात रही।

पार्टी निर्माण का साढ़े तीन दशक पुराना इतिहास जहाँ कई सकारात्मक उपलब्धियाँ दर्शाता है, वहीं यह हमें अर्द्ध-औपनिवेशिक, अर्द्ध-सामन्ती भारत में एक सच्ची सर्वहारा पार्टी का निर्माण करने की राह में आने वाली गम्भीर समस्याओं से भी परिचित कराता है।

पहली बात यह कि **भाकपा (माले)** का गठन भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में बड़ा ब्रेकथ्रू रहा। इसने देश की उत्पीड़ित जनता को यह दिखा दिया कि क्रान्तिकारी पार्टी को कैसे होना चाहिए? एकदम सख्ती से भूमिगत पार्टी, ऐसी जिसका नाभिक सबसे ज्यादा प्रतिबद्ध, विकसित तत्वों से बना हो, जो सही मायने में जनवादी केन्द्रीयता के आधाार पर कार्य करती हो, जो सशस्त्र संघर्ष तीखा करने के दौरान खुद का शुद्धिकरण करती है। हम हजारों पेशेवर क्रान्तिकारियों को भर्ती करने में तो सफल हुए, पर जनता के विभिन्न तबकों के बीच अंशकालिक कार्यकर्ताओं के व्यापक ताने-बाने का निर्माण करने में हम असफल रहे। हमारी इस समस्या का सम्बन्धा इस अवधारणा से रहा कि

पार्टी सदस्यता केवल उन्हीं को दी जाती रही जो क्रान्ति के लिए पूरा समय काम करने के लिए निकल पड़ते हैं।

हालांकि इस गलत समझदारी को बाद के दौर में सुधारा गया और अंशकालिक कार्यकर्ताओं को भी सदस्यता दी जाने लगी, फिर भी अभी पार्टी में अंशकालिक कार्यकर्ताओं की भूमिका कोई खास महत्व की नहीं बन पायी है। इसीलिए अभी स्थानीय पार्टी नेतृत्व कमजोर ही है और जनता की समस्याओं को सुलझाने तथा दुश्मन का प्रतिरोधा करने के लिए आम जनता पीआर साथियों या दस्तों पर निर्भर बनी रहती है। इस स्थिति ने पार्टी के भीतर अनेक गैर-सर्वहारा रुझानों को पैदा किया है, जैसे नौकरशाही, व्यक्तिवाद, मनोगतवाद आदि।

दूसरी बात यह कि सामयिक पराजय और कामरेड सीएम की शहादत के बाद 1972 में **सीसी** के विघटन के दिनों से भारतीय क्रान्ति के एक निर्देशन केन्द्र का गठन न हो पाना हमें लगातार खलता रहा है। **पीडब्ल्यू** और **पीयू** का 1978 में विलय एक निर्देशन केन्द्र के विकास की दिशा में बड़ा कदम रहा और **पीडब्ल्यू** और **पीयू** के विलय के बाद बुनियादी तौर पर यह कार्य पूरा हुआ।

तीसरी यह कि पार्टी विभिन्न स्तरों पर अपेक्षाकृत मजबूत तथा सक्षम पार्टी कमेटियों का निर्माण करने में कुछ हद तक सफल रही, जो कि पूर्ववर्ती दौर में नहीं हो पाया था। वर्ग दुश्मनों और राज्य के खिलाफ एक दीर्घकालिक संघर्ष, अर्थात् अन्दरूनी पार्टी संघर्ष तथा सशस्त्र संघर्ष दोनों एक साथ चलाते हुए केन्द्रीय नेतृत्व सुदृढ़ तथा मजबूत हुआ। लेकिन नेतृत्व की निरन्तरता का अभाव अभी पार्टी में विभिन्न स्तरों पर मौजूद है।

चौथी यह कि विभिन्न गैर-सर्वहारा रुझानों तथा विचारधारात्मक-राजनीतिक कमजोरियों से छुटकारा पाने के लिए शुद्धिकरण अभियानों को चलाते हुए पार्टी को मजबूत करने के प्रयासों से कुछ प्रदेशों तथा विशेष ज़ोनों में सकारात्मक नतीजे मिले हैं। पार्टी का नेतृत्व तथा कार्यकर्ता ज्यादा गहराई से इन भटकावों तथा कमजोरियों को पकड़ पाये हैं और कुछ हद तक इनसे उबर पाये हैं। लेकिन कुछ नेतृत्वकारी

कमेटियों में यह समस्या अभी गम्भीर रूप से बनी हुई है। पिछले कुछ सालों से कुछ सुधार होने के बावजूद अभी पार्टी के विभिन्न स्तरों पर मनोगतवाद, उदारतावाद, स्वतःस्फूर्तता, संकीर्णता, नौकरशाही, कानूनवाद, पितृसत्ता आदि की समस्या परेशानी का सबब बनी हुई है। पेशेवराना रवैये के अभाव की समस्या भी मौजूद है।

आखिर में पार्टी का वर्ग आधार जो शुरुआती दौर में ज्यादा निम्न-पूँजीवादी चरित्र का रहा, कालान्तर में बुनियादी वर्गों का होता गया है। पार्टी कार्यकर्ताओं की बहुसंख्या समाज के सबसे ज्यादा उत्पीड़ित तबके भूमिहीन तथा गरीब किसानों से आने वालों की है। जबकि मध्यम किसानों तथा शहरी निम्न पूँजीपति वर्गों के निचले हिस्सों से आने वाले भी बड़े अनुपात में हैं। खास तौर से 1995 के बाद विशेष सामाजिक तबकों से आये हुए कार्यकर्ताओं की भर्ती तथा प्रोन्नति पर विशेष ध्यान दिये जाने के फलस्वरूप पार्टी में अब दलितों, महिलाओं तथा आदिवासियों के बीच से कार्यकर्ता ठीक-ठाक अनुपात में हैं। लेकिन इन उत्पीड़ित तबकों पर अभी और ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है, खास तौर से उन्हें नेतृत्वकारी स्तरों तक प्रोन्नत करने पर।

हमारे पार्टी निर्माण में मजदूर वर्ग पर संकेन्द्रण का अभाव एक बड़ी कमजोरी रही है। नतीजतन मजदूर वर्ग की पृष्ठभूमि से आये कार्यकर्ता बहुत कम हैं। हालांकि हमारे अर्द्ध-सामन्ती समाज में किसान ही भर्ती का प्रधाान स्रोत होते हैं, फिर भी संगठित तथा असंगठित मजदूर वर्ग की बड़ी संख्या को देखते हुए इस बात की बड़ी जरूरत महसूस होती है कि इस बुनियादी प्रेरक शक्ति पर ध्यान केन्द्रित किया जाय और उन्हें नेतृत्वकारी स्तरों पर प्रोन्नत किया जाय, ताकि वे क्रान्ति में अपनी अगुवा भूमिका अदा कर सकें।

जन सेना का निर्माण

भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में जन सेना का निर्माण एक सतत समस्या रही है। नक्सलबाड़ी से पहले वाले उस दौर को अगर छोड़ा जाय जब संशोधानवाद हावी रहा, तो जन छापामारों द्वारा **मागुर्जन** में दुश्मन की शक्तियों से हथियार छीनने के बाद हमने पहली बार भ्रूण रूप में **पीएलए (जन मुक्ति सेना)** के गठन की घोषणा की थी। 1972 में आन्दोलन के गम्भीर

सामयिक पराजय के बाद इसे विकसित नहीं किया जा सका।

हमारे देश में हम एकदम शून्य से सेना का निर्माण कर रहे हैं। शुरुआत से ही हमारी पार्टी सशस्त्र बल के जरिये राजनीतिक सत्ता दखल करने और युद्ध के जरिये मुद्दों का समाधान करने की रणनीतिक अवधारणा को लेकर काम करती रही है। नक्सलबाड़ी तथा श्रीकाकुलम आन्दोलन की सामयिक पराजय के बाद हमने तेलंगाना और डीके में छापामार दस्तों का निर्माण करने के प्रयास किये। ये दस्ते सांगठनिक और सैनिक दोनों ही कार्य किया करते थे।

कुछ इलाकों में हमने काफी पहले 1993 में ही **विशेष सैन्य दस्ते** गठित कर लिये थे, पर ये विशेष दस्ते काफी समय तक आम रूप नहीं ग्रहण कर पाये। 1994-95 से राज्य के खिलाफ लड़ाई लड़ने के लिए **विशेष छापामार दस्ते (एसजीएस)** गठित किये गये। लेकिन उस वक्त हमने इन्हें आम रूप के तौर पर नहीं अपनाया। इस प्रकार विशेषज्ञता लाते हुए सैनिक और सांगठनिक कार्यों के लिए अलग-अलग दस्ते गठित किये गये। लेकिन **एलजीएस, सीजीएस** और **प्लाटून** को अलग सैन्य कमान के तहत अभी नहीं लाया गया।

फौजी क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल करने के लिए 1996 में अलग उप-कमेटी केन्द्रीय स्कोमा और कुछ प्रादेशिक स्कोमा गठित किये गये। इन सारी चीजों से फौजी क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल हुई और हमारा सशस्त्र प्रतिरोध बेहतर हुआ। फिर भी **पीजीए** और अलग कमान ढाँचों का निर्माण कैसे किया जाय, इस पर हमारी समझदारी अभी स्पष्ट नहीं हो पायी थी। इसीलिए 1995 के **विशेष सम्मेलन** के समय **पीजीए** के गठन के लिए स्थितियाँ परिपक्व होने के बावजूद **सीसी** में मनोगतवाद तथ स्वत:स्फूर्तता के कारण तब इस कार्यभार को हाथ में नहीं लिया जा सका। **सीसी** ने **पीजीए** गठित करने का फैसला अगस्त 2000 में किया और 2 दिसम्बर 2000 को इसे लागू किया गया।

बिहार में पूर्व **पीयू** के इलाकों में 1987 में **क्षेत्रीय कमेटी (आरसी)** के नेतृत्व में **''कमाण्डरों की कमेटियाँ''** गठित की गयीं। 1993 में इन्हें **''सैनिक संचालन टीमों'' (एसएसटी)** के रूप में रूपान्तरित किया गया। ये टीमें दस्तों की सैनिक गतिविधियों तथा गैर-सैनिक श्रमिक कार्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती रहीं। इन्होंने सशस्त्र आक्रमणों के बीच तालमेल बैठाया। इन टीमों को

पहले मगध में और फिर कोयल-कैमूर में गठित किया गया। इनका गठन कमान की समझदारी से किया गया था, पर ठोस अध्ययन तथा नियोजन के अभाव में ये टीमें इस दिशा में विकसित नहीं हो पायीं। 1997 में पूर्ववर्ती **पीयू** ने बिहार में **''सामरिक मामलों की कमेटी'' (एमएसी)** गठित की।

कालान्तर में विकास करते हुए प्रत्यक्ष तथा परोक्ष ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त करते हुए हमारी जानकारी बढ़ी। इसी की परिणति **पीजीए** के गठन और जन सेना का सीधा मार्गदर्शन तथा नेतृत्व करने के लिये एक अलग, सम्पूर्ण **केन्द्रीय सैन्य आयोग (सीएमसी)** के गठन के रूप में हुई।

1995 में हमने उत्तरी तेलंगाना तथ दण्डकारण्य के छापामार ज़ोनों और पूर्वी डिविजन में जनता की राजनीतिक सत्ता के निकायों के निर्माण का कार्य शुरू किया। शुरू से ही हम **''क्रान्तिकारी जन कमेटियों को सारी सत्ता!''** का नारा देकर जनता को शिक्षित करने के कार्यभार पर जोर देते रहे। इन **ग्राम राज्य कमेटियों (जीआरसी) या क्रान्तिकारी जन कमेटियों (आरपीसी)** ने ऐसे समय पर जनता की राजनीतिक सत्ता के निकायों के रूप में जनता का नेतृत्व किया जब जन संघर्षों तथा सशस्त्र प्रतिरोधा के परिणामस्वरूप राज्य के साथ ही सामन्ती शक्तियों तथा जाति/जनजातियों के बड़े-बुजुर्गों का प्राधिकार कमजोर कर दिया गया था। इन निकायों के जरिये भ्रूण रूप में जनता की सत्ता स्थापित की गयी। **जीआरसी** यूँ तो कुछ ही गाँवों में स्थापित की गयीं, मगर इनके जरिये हम नयी राजनीतिक सत्ता के बारे में छापामार जोनों की जनता की चेतना उन्नत कर पाये।

उत्तरी तेलंगाना के छापामार ज़ोनों में दुश्मन के तीखे दमन के कारण **जीआरसी** निष्प्रभावी हुई। दण्डकारण्य के गडचिरोली जैसे उन इलाकों में **जीआरसी** का निर्माण मुश्किल हो गया, जहाँ दुश्मन का तीखा दमन चल रहा है। अगर इस जीआरसी को अपनी नयी राजनीतिक सत्ता टिकाये रखनी हो और दुश्मन का कारगर तरीके से मुकाबला करना हो, तो जनता के सशस्त्र बलों की मौजूदगी और जनता की उन्नत स्तर की चेतना के बिना कोई विकल्प नहीं है। राजकीय दमन और सुधारों को परास्त करते हुए राज्य सत्ता को ध्वस्त करने के दौरान ही हम जनता की राजनीतिक सत्ता को मजबूत कर सकते हैं। अगर हम

पीजीए के साथ इस नयी राजनीतिक सत्ता को जोड़ नहीं पायेंगे, तो इसे टिकाना और अधिक विकसित करना सम्भव नहीं होगा। इस पहलू को पहले हम स्पष्ट तरीके से ग्रहण नहीं कर पाये, इसीलिए **जीआरसी** को टिकाये नहीं रख सके।

जन मिलिशिया की इस भूमिका को समझने के बावजूद हम **जन मिलिशिया** का व्यापक ताना-बाना तैयार करने में कोई खास तरक्की नहीं कर पाये। इसके कारण भी हमारा प्रतिरोध अभी व्यापक नहीं बन पाया है। गाँव-गाँव में **जीआरसी** के नेतृत्व में नयी राजनीतिक सत्ता कायम करने और दुश्मन के खिलाफ जनता के युद्ध को चलाये रखने के लिए जन मिलिशिया अनिवार्य है। मिलिशिया कमजार होने के कारण स्थानीय वर्ग दुश्मनों को दबाना, मुखबिरों पर लगाम लगाना, दुश्मन को तंग करने की गतिविधियाँ संचालित करना और जनता को हथियारों से लैस करना सम्भव नहीं हो पाया।

tu ;|) d| fy, turk dk r|;kj djuk

1972 के बाद हमने जन संगठन के बारे में अपनी दोषपूर्ण समझदारी को सुधार लिया। हमने महसूस किया कि जनता जन संगठनों के ही मार्फत संगठित हो पाती है, वर्ग संघर्षों की ओर खिंची जाती है और संघर्षों के जरिये एहसास कर पाती है कि खुद को तमाम उत्पीड़न तथा शोषण से मुक्त करने के लिए शोषक वर्गों की राज्य सत्ता को उखाड़ फेंकने के अलावा और इसके स्थान पर अपनी राजनीतिक सत्ता कायम करने के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं है।

जन संगठनों का हमारी पार्टी का निर्माण करते हुए हम इस माओवादी मार्गदर्शन पर कायम रहे कि शुरुआत से ही जन संगठनों तथा जन संघर्षों के निर्माण की अपनी दिशा, परिप्रेक्ष्य तथा पद्धति युद्ध की तैयारी और युद्ध की सेवा के लिए होना चाहिए। जन संघर्ष तथा सशस्त्र संघर्ष के बीच द्वन्द्वात्मक अन्तरसम्बन्ध के आधार पर जनता को हजारों और लाखों तक की तादाद में गोलबन्द करने का प्रयास किया है। हमारे क्रान्तिकारी आन्दोलन के विकास में सभी जन संगठनों ने सार्थक भूमिका अदा की है, के लिए बहुत सारी कतारें दी हैं, अपने सैकड़ों नेताओं तथा सदस्यों के रूप में कुर्बानी दी है और राजनीतिक प्रतिष्ठा, प्रभाव तथा लोकप्रियता हासिल की है।

हमारे सभी जन संगठन मुख्यत: सशस्त्र संघर्ष के बीच तप कर निकले हैं। इनके साहसपूर्ण संघर्षों ने सामन्तवाद की चूलें हिलाकर रखी हैं, शासक वर्गों तथा उनके सशस्त्र बलों को चुनौती दे डाली है। हजारों गांवों तथा तमाम शहरों में समाज के उत्पीड़ित तबकों के संघर्षों ने शासक वर्गों के प्रभुत्व तथा आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक उत्पीड़न पर प्रहार किये हैं। जन संगठनों ने जमींदारों के सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक वर्चस्व को ध्वस्त करने में बड़ी अहम् भूमिका अदा की है। बाद में यही जन संगठन जनता की राजनीतिक सत्ता के निकायों के लिए बुनियाद बने।

आन्ध्र प्रदेश, उत्तरी तेलंगाना और आन्ध्र-उड़ीसा सीमावर्ती क्षेत्र में हम 1992-94 की उस पस्ती को तोड़ने में कामयाब हुए, जब दुश्मन की भयानक आक्रामक मुहिम ने जनता के बीच चल रहे हमारों कामों में गम्भीर अवरोध खड़े किये थे। 1995 के बाद के दौर में विभिन्न प्रदेशों में हमारे क्रान्तिकारी जन संगठनों या हमारी पहलकदमी से बनाये गये तमाम कवर संगठनों के नेतृत्व में जन आन्दोलनों का पुनरुत्थान देखा गया। दुश्मन के भारी दमन के बावजूद आन्ध्र प्रदेश, उत्तरी तेलंगाना, आन्ध्र-उड़ीसा सीमा, दण्डकारण्य, बिहार, झारखण्ड, बिहार-बंगाल-उड़ीसा सीमावर्ती क्षेत्र, तमिलनाडू, कर्नाटक और देश के अन्य हिस्से में कई-कई संघर्ष किये गये। इसीलिए दुश्मन को अपने हमले तेज करने के लिए ज्यादा भारी मात्रा में विशेष पुलिस बलों तथा अर्द्ध-सैनिक बलों को अत्याधुनिक अस्त्र-शस्त्र से लैस करके एवं खास तौर से प्रशिक्षित करके तैनात करना पड़ा। दुश्मन ने पाँच प्रदेशों आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा बिहार में अपनी दमनकारी गतिविधियों के बीच बेहतर तालमेल व सहयोग की योजना बनाते हुए जून 1998 में केन्द्र के मातहत **'संयुक्त तालमेल कमेटी' (ज्वाइण्ट कोऑर्डिनेशन कमेटी - जेसीसी)** और अप्रैल 2000 में **'जेओसी' (ज्वाइण्ट ऑपरेशन्स कमाण्ड)** गठित किया। साथ ही, आम जनता का ध्यान जुझारू क्रान्तिकारी संघर्षों से हटाने के लिए राज्य बड़े पैमाने पर सुधार और अनुदान कार्यक्रम भी चला रहा है।

आन्ध्र प्रदेश के कुछ इलाकों में शुरुआती दौर में हमारे जन संगठनों ने थोड़े समय तक खुला काम किया। लेकिन मुख्यत: उनकी कार्यप्रणाली गुप्त ही

रही है। कुछ अन्य इलाकों में जहाँ वर्ग संघर्ष कमजोर रहा, जन संगठन खुला काम करते रहे। दण्डकारण्य में शुरू से ही जन संगठन भूमिगत रहे और गुप्त तरीके से काम करते रहे। आन्ध्रा प्रदेश में पहली बार 1992 में जन संगठनों पर औपचारिक तौर पर प्रतिबन्ध लगाया गया। लेकिन अघोषित प्रतिबन्ध तेलंगाना में 1980 से, समूचे आन्ध्र प्रदेश में 1985 से और समूचे दण्डकारण्य में शुरुआती दिनों से ही रहा। बिहार में 1986 में **एमकेएसएस** पर प्रतिबन्धा लगाया गया। बावजूद इन प्रतिबन्धों के, इन सभी प्रदेशों में जनता लगातार हजारों से लाखों तक सभाओं तथा रैलियों में शिरकत करती रही।

कुल मिलाकर जन मोर्चों में हमारी उपलब्धियाँ प्रधान रही हैं, जबकि खामियाँ गौण। हमारी खामियाँ संघर्षों में शिरकत करने वाली शक्तियों के सुदृढ़ीकरण में असफलता, कम सदस्य संख्या, जन संगठनों के नेतृत्व में निरन्तरता विकसित करने में असफलता, निचले तथा ऊपरी निकायों के बीच तालमेल में असफलता, गुप्त तथा खुले काम के बीच तालमेल करने में असफलता, जन संघर्षों में संकीर्णतावादी रुझान, 1984 से पहले खुले काम पर जरूरत से ज्यादा जोर, जन संगठनों व जन आन्दोलनों के निर्माण में स्वत:स्फूर्तता, नये इलाकों तक विस्तार करने में नियोजन का अभाव आदि रहीं। आम तौर पर ये खामियाँ प्रदेशव्यापी जन संगठनों तथा अखिल भारतीय जन संगठनों पर लागू होती हैं।

पार्टी कमेटियों में विभिन्न स्तरों पर कमजोरियों, मोर्चा विशेष में स्पष्टता, विशेषज्ञता तथा अनुभव की कमी, स्वत:स्फूर्तता का प्रचलन और कमेटियों पर काम के भारी बोझ के कारण जन संगठनों की सम्बन्धित स्तर की कमेटी को सही समय पर और ठीक से मार्गदर्शन नहीं मिल पाता है। जन संगठनों का करीबी से मार्गदर्शन करने में पार्टी कमेटियों के सामने संघर्ष के इलाकों में दुश्मन द्वारा संकेन्द्रण किया जाना और जन संगठनों के नेतृत्व की मुठभेड़ों में हत्या करके श्वेत आतंक फैलाया लाना एक बड़ी समस्या है।

कुछ पार्टी इकाइयों में संघर्ष और संगठन के रूपों को लेकर यान्त्रिक समझदारी मौजूद है। संघर्ष और संगठन के रूप स्थितियों और संघर्ष की मंजिल के बदलने के साथ बदलते रहते हैं। एक क्षेत्र में प्रचलित रूपों की दूसरी क्षेत्र में यान्त्रिक तरीके से नकल करने के प्रतिकूल परिणाम सामने आते है। एक ही

क्षेत्र में भी आज अपनाये गये रूप कल भी अपनाये जाये, यह जरूरी नहीं। बदलती स्थितियों के अनुरूप सृजनात्मक रूप से कार्यनीति पर अमल करने और तुरन्त एक रूप को बदलकर दूसरे रूप को अपनाने के लिए विभिन्न पार्टी कमेटियों तथा जन संगठन के नेतृत्व को निपुणता हासिल करनी चाहिए।

हमारे जन कार्यों में कानूनवाद मुख्यत: तबकाई मांगों और आम जनवादी चरित्र की अन्य मांगों का समाधान करने के लिए काम की कानूनी/खुली पद्धतियों तथा कानूनी/खुले संघर्षों पर भरोसा करने के रूप में प्रकट होता है। कानूनवाद का उद्‌भव भारत में कानूनी या खुले जन आन्दोलन की गुंजाइश के बढ़े-चढ़े आकलन के कारण और हमारे देश में जन युद्ध की दीर्घकालिक प्रकृति के बारे में स्पष्टता के अभाव के कारण होता है।

निम्न पूँजीवादी व्यक्तिवाद तथा अहंवाद, अराजकतापूर्ण रवैये तथा अनुशासन का अभाव, संकीर्ण नजरिया, नौकरशाही आदि जन संगठनों के नेतृत्व में आम तौर पर पायी जाने वाली विशेषताओं में हैं।

जहाँ हमारे जन संगठनों को खुलकर काम करने का मौका नहीं मिल पाता, वहाँ कवर संगठन अपरिहार्य होते हैं। हम अन्य इलाकों में भी जरूरत के मुताबिक कवर संगठन बना सकते हैं। कवर संगठन बनाने के पीछे मकसद खुले जन कार्य करते हुए अपनी शक्तियों को दुश्मन के सामने न खुलने देना होता है। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि कवर संगठन कानूनी या भूमिगत जन संगठनों का स्थान नहीं ले सकते। कवर संगठनों के भीतर हमें पार्टी इकाइयाँ गठित करनी होंगी और उनका निर्देशन करना होगा।

एपी, एनटी, एओबी में कवर संगठन बनाने के प्रयास तो 1985 से ही शुरू किये गये थे। मगर 1995 के बाद के दौर में ही जाकर कहीं हम इस दिशा में कुछ प्रगति कर पाये। कवर संगठनों के जरिये बड़ी तादाद में जनता को गोलबद करने और इस दौरान शासक वर्गों के हमारे जन संगठनों पर प्रतिबन्ध लगाकर जनता को नेतृत्वहीन बना देने के प्रयासों को नाकाम करने में हमें कामयाबी मिल पायी है।

कवर संगठन संचालित करने में हमारी कुछ खामियाँ रही हैं। इनमें ढीली-ढाली बातें करने के कारण संगठन का खुलासा कर देना, कवर संगठनों

के कार्यक्रमों में पार्टी के जरिये ऐसी भारी जन गोलबन्दी करना जिससे उन संगठनों का खुलासा हो जाय, कवर संगठनों की बैठकों में उन वक्ताओं को बुलाना जिनका खुलासा हो चुका हो, कवर संगठनों के नेतृत्व से अपने इलाके में मिलना और इस तरह पार्टी तथा दस्ते के तमाम सदस्यों तथा आसपास के गाँवों के सामने उनका खुलासा कर देना, कवर संगठनों के नेतृत्व में चल रहे संघर्षों में पार्टी एवं दस्तों को शामिल करना और इन संघर्षों को सफल बनाने के लिए दुश्मन को धामकियाँ तक देना, कवर संगठनों के लिए प्रगतिशील या उग्र परिवर्तनकारी लगनेवाले नाम चुनना, कवर संगठनों के मंच से हमारे नारे देना तथा हमारे गीत गाना, रातोंरात कवर संगठन बना देना और इस तरह पुलिस को चौकन्ना कर देना आदि शामिल हैं। कवर संगठनों में काम के लिए अभी पर्याप्त मात्र में सक्षम व अनुभवी पेशेवर क्रान्तिकारी तथा संगठनकर्ता नियुक्त नहीं किये जा रहे हैं।

हम अभी संयुक्त मोर्चे के काम पर अच्छी तरह ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाये हैं और किसी भी स्तर पर काई विशेषज्ञता नहीं रही है। इस बात का संयुक्त मोर्चे की गतिविधियों पर गम्भीर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। हम स्वत:स्फूर्त जन आन्दोलनों में हस्तक्षेप करने के लिए या अन्य संगठनों के साथ साझे मंच तैयार करने के लिए शक्तियाँ नियुक्त नहीं कर पाये हैं। इसीलिए क्रान्तिकारी वर्गों से जुड़ी शक्तियों को अपने पक्ष में लाने में हम स्फल नहीं हो पाये हैं। आन्दोलन, नेतृत्व और पार्टी के निचले स्तरों पर संकीर्णता भी काफी गम्भीर है। इसे दो रूपों में देखा जाता है :- एक, जब दूसरे संगठन दिलचस्पी दिखाते हों तो भी समान मुद्दों पर उनके साथ मिलकर साझी गतिविधियाँ करने से दूर रहना। दूसरे, संयुक्त संघर्ष समितियों में संकीर्ण गतिविधियों से उनको तुड़वा देना।

हमारी पार्टी तथा जन संगठनों पर लगे प्रतिबन्ध के कारण संयुक्त मोर्चे के काम में तैनात किये गये हमारे कामरेड़ों को गम्भीर सीमाओं में रहकर काम करना पड़ता है। इसीलिए लम्बे दौर में लगातार धैर्यपूर्वक काम करते रहने से ही हम संयुक्त मोर्चे पर अपना नेतृत्व कायम कर पायेंगे।

नौवीं काँग्रेस और उसके बाद

सन 2001 की 9वीं काँग्रेस ने विचारधारात्मक और राजनीतिक रूप से परिपक्व पार्टी को उभरते हुए देखा, एक नये किस्म की पार्टी को, जिसने खुद को दशकों पुराने तीखे वर्ग संघर्ष के बीच तपा लिया है। पार्टी ने अब अखिल भारतीय स्वरूप ग्रहण कर लिया है। एक दर्जन से ज्यादा प्रदेशों में इसका संगठन है, जन छापामार सेना **पीजीए** है और अनेक विभाग चल रहे हैं।

काँग्रेस में पार्टी की लाइन पहले से ज्यादा सुदृढ़ और समद्ध हो पायी। 1970 की **८वीं काँग्रेस** मे सूत्रबद्ध पार्टी की बुनियादी लाइन पर दृढ़ता से अडिग रहते हुए **9वीं काँग्रेस** ने सालों से अर्जित समृद्ध अनुभवों पर आधारित होकर और पिछले तीन दशकों के राजनीतिक विकासक्रम का जायजा लेकर आवश्यक परिवर्तन किये और बहुत सारी अवधारणाओं को समृद्ध किया। इस **काँग्रेस** ने क्रान्ति के तीन उपकरणों पार्टी, सेना तथा संयुक्त मोर्चे को ढालने और कार्यनीति को सूत्रबद्ध करने के दौरान उभर आये ''दक्षिणपंथी'' तथा ''वामपंथी'' भटकावों के विरुद्ध दृढ़तापूर्वक लड़ाई लड़ी। जन सेना, छापामार ज़ोन, आधार इलाकों और क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे की अवधारणाओं के विषय में नौवीं काँग्रेस ने समझदारी का स्तर उन्नत किया।

९वीं काँग्रेस ने इस प्रकार उपरोक्त अवधारणों के सम्बन्ध में **पीडब्ल्यू** के 1995 के **एआईएससी** तथा **पीयू** के 1997 के **केन्द्रीय सम्मेलन** की समझदारी की खामियों को दुरुस्त किया, क्रान्ति के तीनों उपकरणों को ढालने की प्रक्रिया में पार्टी नेतृत्व की सचेत भूमिका पर बल दिया और फलस्वरूप देश में चल रहे जन युद्ध में नया ब्रेकथ्रू हासिल करने के लिए जमीन तैयार की।

काँग्रेस ने जन युद्ध को तीव्र करने और देश के अन्य भागों तक विस्तारित करने का दृढ़ संकल्प लिया। इसने समूची पार्टी का आह्वान किया कि मुक्त क्षेत्र को स्थापित करने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दे और इसे अंजाम देने के लिए ठोस योजनाएँ तैयार करें। **काँग्रेस** ने देश में चल रहे राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों के साथ तालमेल स्थापित करने और पूरी शिद्दत के साथ कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के एकीकरण के कार्यभार को जारी रखने का

अपना दृढ़निश्चय व्यक्त किया। **काँग्रेस** ने पार्टी का इस बात के लिए आह्वान किया कि सांगोपांग शुद्धिकरण अभियान से गुजरते हुए विभिन्न गैर-सर्वहारा रुझानों से खुद को मुक्त करें तथा इस तरह अपना सर्वहाराकरण करें और अपने तमाम सारे कार्यभारों को पूरा करने के लिए चुस्त-दुरुस्त हो लें।

९वीं काँग्रेस में चिह्नित खामियाँ

काँग्रेस ने इस खामी को चिन्हित किया कि हम जन युद्ध के स्तर के बराबर लोक जनवादी सत्ता के निकाय नहीं कर सके हैं। सैकड़ों गाँवों में सामन्ती शक्तियों पुराने प्राधिकार को उखाड़ फेंका गया और राज्य को काफी कमजोर कर दिया गया था। परन्तु इस खालीपन को जनता की नयी सत्ता से भरा नहीं गया है।

आन्दोलन को गति देने में बाधक के कुछ कारकों के तौर पर पार्टी निर्माण में कमजोरियों को, मसलन अंशकालिक पार्टी सदस्यों तथा कुछ नेतृत्वकारी पार्टी कमेटियों तक में पेशेवरता के अभाव को चिन्हित किया गया।

काँग्रेस ने दुश्मन के कार्यनीतिक आक्रमणों तथा सुधारों एवं अनुदान कार्यक्रमों का मुकाबला करने की उपयुक्त कार्यनीति सूत्रबद्ध करने में कमजोरियों को दूर करने, वास्तविक स्थितियों का ठोस अध्ययन करने, अपने बलों की तैनाती में लचीलापन अपनाने तथा दुश्मन के भारी आक्रमणों की सूरत में कुछ इलाकों से अपनी शक्तियों को स्थायी रूप से पीछे हटाने की कार्यनीति अपनाने, शहरी कार्यों के संदर्भ में अपनी कार्यपद्धति के दोषों को दूर करने और मौजूदा जनयुद्ध के साथ जन संघर्षों को कारगर रूप से जोड़ने का आह्वान किया।

9वीं काँग्रेस के मूल्यांकन और इससे नीकली शिक्षाओं के आधार पर पूर्ववर्ती पी.डब्ल्यू. ने पार्टी तथा सेना निर्माण करने, रणनीतिक इलाकों में चुनिन्दा इलाकों (पॉकेटों) में छापामार आधारों, जनता की जनवादी सत्ता के निकायों का निर्माण करने, शुद्धिकरण अभियान तथा योजनाबद्ध ढंग से कार्यनीतिक प्रत्याक्रमण अभियानों को चलाने के सन्दर्भ में ठोस कार्यभार तय किये। कुछ प्रदेशों में सार्थक सफलताएँ भी हासिल कीं। इससे मौजूदा जनयुद्ध को भारी दमन तथा सुधारों और अन्य रूपों से दबाने के दुश्मन के प्रयास नाकाम किये जा सके।